चतुर्थ अध्याय
'झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई' एवं 'मृगनयनी' उपन्यासों में पात्र एवं चरित्र–चित्रण

रानी लक्ष्मीबाई – 'झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई'

चतुर्थ अध्याय : 'झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई' एवं 'मृगनयनी' उपन्यासों में पात्र एवं चरित्र–चित्रण

उपन्यास मानव जीवन की अभिव्यक्ति है तथा उसमें पात्र एक महत्वपूर्ण तथा अनिवार्य तत्व है। कथानक, चरित्र–चित्रण आदि तत्व इस एक तत्व को ही विकसित करते हैं। पात्र के बिना उपन्यास की कल्पना करना उसी तरह है जैसे कि बिना व्यक्ति के समाज की कल्पना करना। 'चरित्र' शब्द पात्र से ही संबंधित है, परंतु दोनों एक नहीं है। उपन्यास के तत्वों में 'पात्र' को ही 'चरित्र' मानकर व्याख्या की जाती है। पात्र तथा चरित्र एक होते हुए भी एक–दूसरे से भिन्न है। समाज में रहने वाले मानव की अपनी कुछ निजी विशिष्टताएँ होती हैं, उसका विशिष्ट चरित्र या व्यक्तित्व होता है जो हर एक व्यक्ति को दूसरे से भिन्नता प्रदान करता है। वस्तुतः चरित्र पात्र के गुण–दोषों का लेखा–जोखा है, उसका जीवन परिचय है।

उपन्यासकार द्वारा 'चरित्र' को रूप देने की प्रणाली 'चरित्र–चित्रण' कहलाती है। इस प्रकार 'पात्र', 'चरित्र' और 'चित्रण' तीनों आपस में बंधे हुए हैं। पात्र के बिना उपन्यास की कल्पना करना मात्र निरर्थक ही है। अतः जब पात्र होंगे तब चरित्र–चित्रण भी अवश्य होगा।

औपन्यासिक पात्र अथवा चरित्र के संबंध में फास्टर का कहना है कि आत्माभिव्यक्ति करता हुआ उपन्यासकार कुछेक शब्दमूर्तियाँ गढ़ डालता है, फिर उनके साथ नाम तथा लिंग जोड़ता है, उन्हें अनुभव प्रदान करता है, उनसे उद्धरण चिन्हों में बातचीत करवाता है और कभी–कभी उनसे एक सार व्यवहार भी करवाता है – ये शब्द मूर्तियाँ ही उपन्यास के पात्र हैं। उपन्यास के पात्र नाम और लिंग युक्त सजीव शब्द मूर्तियाँ तो अवश्य हैं पर ये कथानक के माध्यम से एक दूसरे

से जुड़ी रहती हैं। स्वतंत्र और निरपेक्ष रहकर उनका उपन्यास में कोई महत्व नहीं है। उपन्यास के लिए उनकी यह एकसूत्रता ही महत्व और अर्थ रखती है। ये पात्र उपन्यास में देशकाल, वातावरण से प्रभावित होते हुए तथा उनके अनुकूल–प्रतिकूल आचरण करते हुए कथानक विकसित करते हैं। कथानक का हर सूत्र इनके चारों ओर घूमता है अर्थात् औपन्यासिक पात्र का संबंध–प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप में उपन्यास की हर घटना से होता है। वह उपन्यास की घटनाओं को विकास देता है एवं स्वयं विकास पाता है। अगर मनुष्येतर (पशु, पक्षी आदि) प्राणी भी उपन्यास के कथानक को विकसित करने या किसी पात्र के चरित्र के विशिष्ट पक्ष पर प्रकाश डालता है तो वह भी औपन्यासिक पात्र की संज्ञा से अभिहित होता है।

1. उपन्यास के रचना तत्वों में पात्र–योजना एवं चरित्र–चित्रण :

उपन्यास के रचना तत्वों में आम तौर से सभी तत्व अत्यावश्यक हैं। उनके परस्पर सामंजस्य से ही अच्छी कृतियों का निर्माण होता है। मगर अधिक सूक्ष्म दृष्टि से परीक्षण किया जाय तो उपन्यास में पात्रों का महत्व अधिक लक्षित होता है। उपन्यास मानवीय जीवन की प्रक्रियाओं का वर्णन करता है और ये पात्र उपन्यास के संसार में उसका क्रियात्मक रूप प्रदान करते हैं। यद्यपि वे पूर्णतया कल्पित होते हैं और उपन्यासकार की रचना मात्र होते हैं, फिर भी वे इतनी कुशलता से प्रस्तुत किये जाते हैं कि पूर्णतया वास्तविक प्रतीत होते हैं। उनका हमारे जीवन के साथ निकटतम तादात्म्य होता है। उपन्यास की रचना के पीछे केवल एक ही कारण होता है, वह जीवन की अभिव्यक्ति का प्रयास करता है।

कथानक उपन्यास का एक अनिवार्य तत्व है। उसमें विभिन्न घटनाओं का संगुफन किया जाता है। इन घटनाओं का प्रकटन पात्रों के द्वारा किया जाता है। उपन्यास के पात्रों में और यथार्थ जीवन के पात्रों में अन्तर का प्रमुख कारण यह है कि उपन्यास के पात्रों के आंतरिक जीवन से हम पूर्णतया परिचित होते हैं।

उपन्यासकार अपने पात्रों को पूर्णतया चीर–फाड़ कर उनको इस रूप में प्रस्तुत करता है कि उनके संबंध में कुछ भी रहस्यात्मक नहीं रह जाता। इसके विपरीत वास्तविकता में यदि कोई व्यक्ति जब तक यह नहीं कहता उसने ऐसा अनुभव किया या वह किया, हम उनकी आन्तरिक कृतियों से पूर्णतया अपरिचित रहते हैं। हम उनकी बाह्य प्रवृत्तियों से ही उनके संबंध में कोई धारणा निश्चित करते हैं, उनकी अच्छाइयों व बुराइयों का निर्णय करते हैं और उनसे घृणा या प्रेम करने के दायित्व को समझने का प्रयास करते हैं।

इतिहासकार भी इतिहास में पात्रों का वर्णन करता है। उसका पात्रों से उतना ही संबंध होता है जितना उपन्यासकार का किन्तु वह केवल उनके बाह्य अस्तित्व को ही इतिहास में प्रदर्शित कर पाता है। मगर उपन्यासकार इसके विपरीत अपना चरण आगे बढ़ाता है। वह पात्रों के जीवन की अन्तर्वृत्तियों को स्पष्ट रूप से हमारे सम्मुख उपस्थित करता है। उसके जीवन का कोई रहस्य हमसे अपरिचित नहीं रहता और वह हमारे अधिक निकट आ जाता है। उपन्यास कला की अन्यतम प्रक्रिया है। उसके कुछ अपने नियम होते हैं, जो हमारे दैनिक जीवन के नियमों से पूर्णतया भिन्न होते हैं। उपन्यास के पात्र तभी तक सत्य और यथार्थ हैं, जब तक वे इन नियमों के अनुसार परिचालित होते हैं।

अतः यह स्पष्ट है कि पात्रों को इस रूप में प्रस्तुत किया जाना चाहिए कि वे अवास्तविक न प्रतीत हों, इसी लोक के हों, हमारे जाने–पहचाने हों। वास्तविक जीवन से सामंजस्य रखनेवाले पात्रों की अवतारणा होनी चाहिए जिससे उपन्यास की सत्यता में किसी को कोई संदेह उत्पन्न न हो। उपन्यास के पात्रों के स्वतंत्र विकास की ओर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए, उन पर उपन्यासकार का कम से कम नियंत्रण होना चाहिए।

औपन्यासिक पात्र हमारे जाने–पहचाने हों, उनसे हमारा निकटतम संबंध हो। कोई भी पात्र किसी जीवित व्यक्ति की पूर्ण प्रतिकृति नहीं करता। इससे उसका स्वतंत्र अस्तित्व नष्ट हो जाता है। पात्रों की सजीवता बनाए रखने का सबसे कम उपाय यह है कि उनके रूप में किसी जीवित व्यक्ति का पूर्ण प्रतिबिंब स्थापित किया जाए। उपन्यास के पात्र वस्तुतः वस्तुजगत के व्यक्तियों द्वारा अनुप्राणित हैं, पर वे उनका रेखा–प्रतिरेखा रूप कदापि नहीं होते।

उपन्यासकार के जीवन में अनेक व्यक्तियों का प्रवेश होता है। उसके सम्पर्क में आए हुए व्यक्तियों में से अधिकांश उसे प्रभावित भी करते हैं। वह अपने कथानक की आवश्यकतानुसार एक पात्र की कल्पना करके उसे निर्मित करता है। उसके द्वारा निर्मित इसी नई सृष्टि को पात्र की संज्ञा दी जा सकती है। अतः पात्र हमारे मानवीय जीवन से संबंध रखते हुए भी किसी की पूर्ण प्रतिकृति नहीं होते। उनका अपना निजी अस्तित्व भी होता है।

उपन्यास में पात्रों की संख्या कितनी होनी चाहिए, यह कथानक की सीमा के साथ ही उपन्यासकार के व्यक्तित्व और उसकी कला पर भी निर्भर होता है। कुछ उपन्यासकार बहिर्मुखी व्यक्तित्व के होते हैं, कुछ अंतर्मुखी व्यक्तित्व के। पात्रों की संख्या पर उपन्यासकार की इन विशेषताओं का अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। बहिर्मुखी व्यक्तित्व वाला उपन्यासकार स्वभावतः कथानक की सीमा अत्यन्त विस्तृत रखना चाहेगा और प्रायः सभी प्रकार के पात्रों का चित्रण उपस्थित करना चाहेगा। यह आवश्यक नहीं कि विस्तृत कथानक उपस्थित करने की इच्छा के साथ वह सभी पात्रों का चरित्र–चित्रण भी सफलतापूर्वक उपस्थित कर सके, यह तो उसकी कला निपुणता पर निर्भर होता है। इसके विपरीत अंतर्मुखी प्रवृत्ति का उपन्यासकार कथा का परिवेश सीमित रखेगा और कम ही पात्रों से अपना कार्य चलाने का प्रयास करेगा। पात्रों की संख्या पर कथानक के आधार का भी प्रभाव

पड़ता है। पात्र योजना में लेखक को यथेष्ट मात्रा में सतर्कता रखनी पड़ती है, क्योंकि अनावश्यक रूप से पात्रों को रख देने से, कथानक की गतिशीलता में कोई विशेष योगदान नहीं होता। उपन्यास की प्रभावशीलता समाप्त हो जाती है। पात्र कथानक को उपन्यास के निश्चित उद्देश्य तक पहुँचने में सहायता देते हैं। इसीलिए ऐसे पात्रों की अवतारणा नहीं की जाती, जिनका कोई काम नहीं होता और वे निठल्ले होते हैं।

1.1. चरित्रांकन के माध्यम एवं चरित्रों के विविध प्रकार :

चरित्र से ही पात्र सजीव व भिन्नता प्राप्त कर सकते हैं। यही कारण है कि पात्र तथा चरित्र का गहरा संबंध है। इसलिए पात्र तत्व का संपूर्ण वर्णन चरित्र के विवेचन के बिना नहीं किया जा सकता। विद्वानों ने चरित्र की विभिन्न प्रकार से व्याख्याएँ की हैं, किन्तु फिर भी चरित्र की जटिलता कम नहीं हुई। चरित्र मानव से संबंध है और यह मानव अपने आप में ही एक जटिल पहेली है। मनुष्य जो कुछ है वही उसका चरित्र है। अंतःकरण के द्वारा ही चरित्र की अभिव्यक्ति होती है। अतः अंतःकरण को ही मूल चरित्र कहना असंगत न होगा। चरित्र एक प्रकार की बौद्धिक, भावुक और हताश आदतों का सम्मिश्रण है। चरित्र विकासशील होता है। बुद्धि, भाव और अहं तथा क्रिया चरित्र को रूप देने में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। कुछ ही तत्वों के संगठन को चरित्र की संज्ञा नहीं दी जा सकती, क्योंकि चरित्र के निर्माण में अनेक तत्वों का सम्मिश्रण होता है।

1.1.1. चरित्रांकन के माध्यम :

किसी भी पात्र का चरित्र चार प्रकार से स्फुट होता है :

1. मनोवैज्ञानिक अर्न्तद्वन्द्वों के द्वारा
2. पात्र के अपने कथन के द्वारा
3. पात्र की क्रियाओं के द्वारा
4. पात्र के विषय में दूसरे पात्रों के अभिमत के द्वारा

चरित्रांकन के माध्यम

1. मनोवैज्ञानिक अर्न्तद्वन्द्वों के द्वारा :

इस प्रणाली के द्वारा पात्र की आंतरिक वैयक्तिकता स्पष्ट होती है। उसके व्यक्तित्व के उच्चतम और निम्नतम प्रदेशों की जानकारी होती है। अर्न्तद्वन्द्व विश्लेषण लेखक की ओर से मुख्यतः होता है।

2. पात्र के अपने कथन के द्वारा :

पात्र जो कुछ कहता है उससे भी उसका चरित्र स्पष्ट होता है।

3. पात्र की क्रियाओं के द्वारा :

पात्र की क्रियाओं–किसी विशेष परिस्थिति में वह किस प्रकार कार्य करता है – के द्वारा उसके चरित्र का बिल्कुल सही अनुमान लगता है।

4. पात्र के विषय में दूसरे पात्रों के अभिमत के द्वारा :

प्रत्येक पात्र पर दूसरे पात्र प्रायः अपनी राय दे देते हैं। इन अभिमतों

चरित्रों के विविध प्रकार

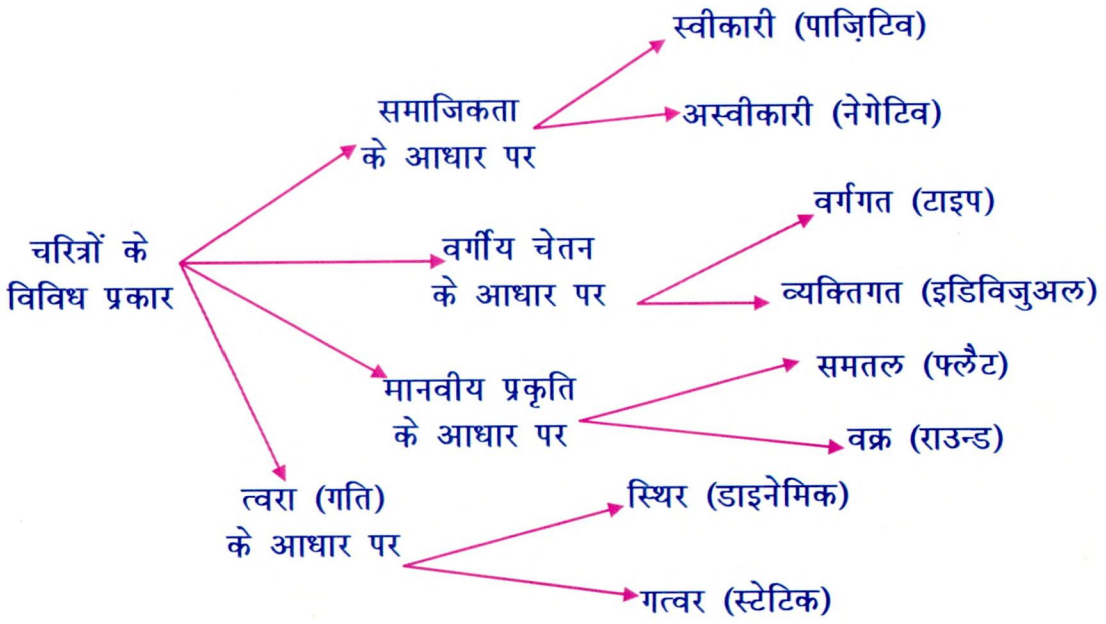

(i) सामाजिकता के आधार पर :

स्वीकारी और अस्वीकारी (Postive and Negative)

स्वीकारी स्वभाव का व्यक्ति सामाजिक विधि–निषेध और परंपरागत सामाजिक मूल्यों को मानकर चलता है लेकिन अस्वीकारी या नकारात्मक विशेषताओं का व्यक्तित्व सामाजिक विधि निषेध और परंपरागत रूढ़ियों को अस्वीकार करके स्वतंत्र व्यक्तित्व का निर्माण करता है।

(ii) वर्गीय चेतन के आधार पर :

वर्गगत और व्यक्तिगत : (Type and Individual)

वर्गगत चरित्र एक विशेष प्रकार के वर्ग की विशेषताओं का प्रतिनिधि होता है और व्यक्तिगत चरित्र एक विशेष प्रकार के व्यक्ति की विचित्रताओं से युक्त होता है। वर्गगत व्यक्तित्व के पीछे उस प्रकार के व्यक्तियों की एक परंपरा मिल सकती है लेकिन व्यक्तिगत चरित्रों के पीछे केवल एक व्यक्ति की ही विशेषताएँ होंगी।

(iii) मानवीय प्रकृति के आधार पर :

समतल और वक्र : (Flat and Round)

समतल चरित्रों में किसी चरित्र की आगामी परिणतियाँ प्रायः अनुमान की जा सकती हैं लेकिन वक्र चरित्रों में आगामी परिणतियों का कोई ठीक अनुमान नहीं किया जा सकता है।

(iv) त्वरा (गति) के आधार पर :

स्थिर और गत्वर : (Dynamic and Static)

डाइनेमिक और स्टेटिक–का भेद यह है कि स्थिर चरित्रों में निश्चित चारित्रिक विशेषताएँ होती हैं और किसी विशेष प्रकार की घटना पर प्रतिक्रिया

(react) करने का उसका ढंग भी पूर्व निश्चित होता है इसलिए उसमें स्थिरता बनी रहती है। लेकिन जिस चरित्र में निरन्तर विकासशीलता मिलती है उस चरित्र को गत्वर कहा जाता है। जो व्यक्ति स्वीकारी होता है, वही वर्गगत, समतल और स्थिर भी होता है। इसके विपरीत जो अस्वीकारी चरित्र वाला होता है, वही व्यक्तिगत, वक्र और गत्वर भी होता है।

2. 'झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई' में पात्र एवं चरित्र–चित्रण :

'झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई' डॉ. वृंदावनलाल वर्मा का बृहदकाय ऐतिहासिक उपन्यास है। 349 पृष्ठीय इस उपन्यास का प्रकाशन सन् 1946 ई. में हुआ। इसकी कथा इतिहास की दीर्घ (सन् 1762 ई. से 1858 ई. तक) और विस्तृत घटनाचक्र को समेटे हुए है। अतः इसमें 54 पात्रों का चरित्र चित्रित है। इन पात्रों में कुछ ही पात्र ऐसे हैं जिनकी जीवन की रेखाएँ स्पष्ट उभर पाई हैं। वे हैं:–

नारी पात्र	पुरुष पात्र
1. झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई (प्रमुख नारी)	1. राजा गंगाधरराव–झाँसी के राजा
2. जूही – रानी की दासी	2. तात्या टोपे – सेना नायक
3. मुंदर – रानी की दासी	3. राव साहब – सेना नायक
4. मोती बाई – स्वातंत्र्य समय की बलिदानी नारी	4. नवाब अली बहादुर–देश द्रोही
5. सुंदर – रानी की दासी	5. पीरअली – देश द्रोही
6. काशीबाई – रानी की दासी	6. खुदाबख्श – सेनानी
7. झलकारी दुलैया – आदर्श पात्र	7. ह्यूरोज–अँग्रेज़ी सेना का प्रमुख अफसर
8. बख्शन जू – आदर्श पात्र	8. रघुनाथ सिंह – सेनापति
	9. जवाहर सिंह – सेनापति
	10. गुल मुहम्मद – सेनानी
	11. गौस खाँ – सेनानी
	12. बख्शी – आदर्श पात्र

शेष पात्रों में से अधिकांश उपन्यास के कथावृत्त में गौण भूमिका निभाते हैं। पात्रों की बहुलता के कारण उपन्यास में उनके चरित्र का आभास मात्र हो पाया है। उपन्यासकार का प्रधान लक्ष्य रानी लक्ष्मीबाई का चरित्र था। इसलिए प्रासंगिक और प्रकरी कथा के पात्रों का चरित्र पूर्णतः विकसित नहीं हो पाया। अतः अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से प्रमुख पात्रों का वर्गीकरण ही उपादेय है, जो विविध आधारों पर प्रस्तुत किया जा रहा है।

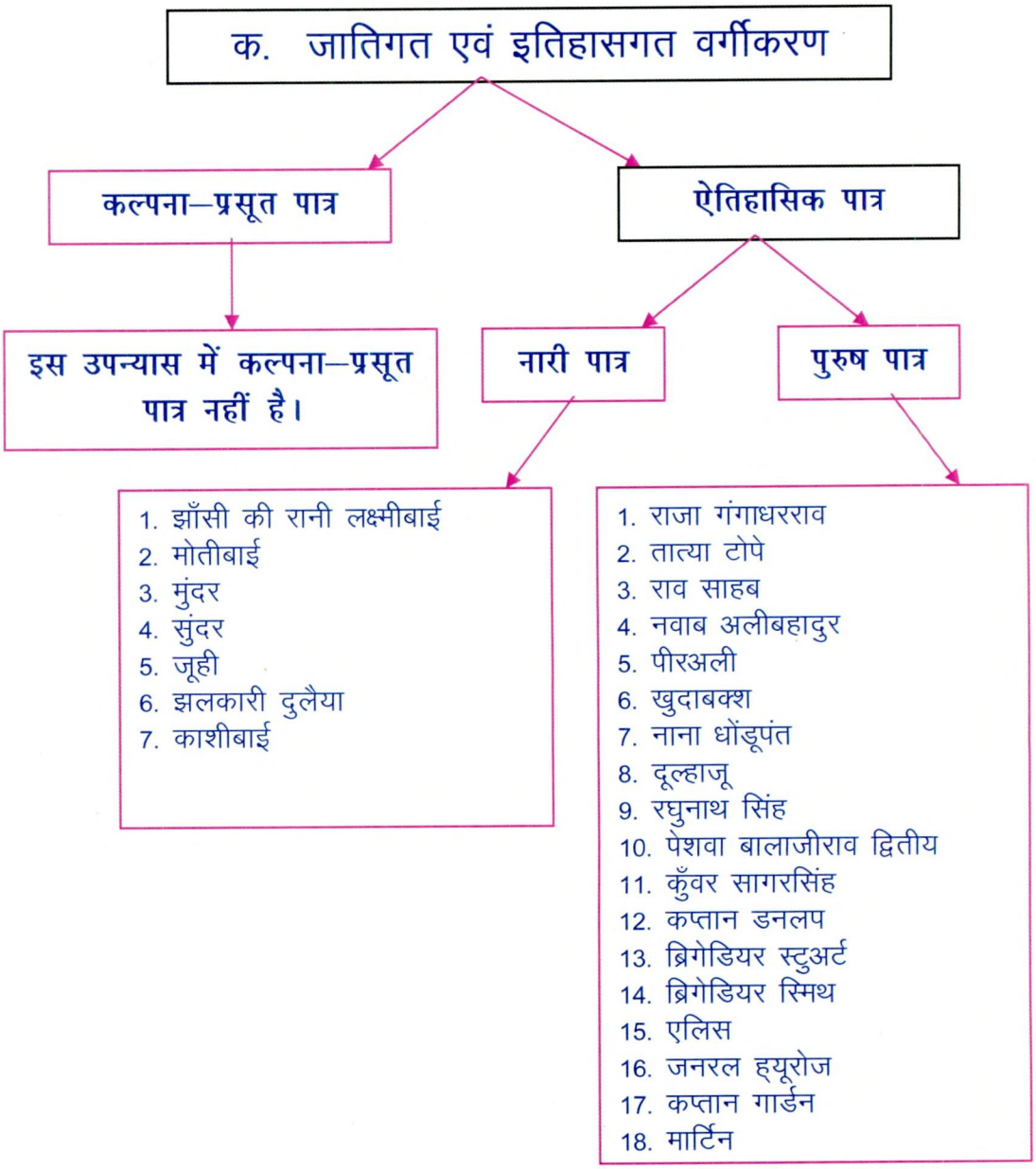

'झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई' के पात्रों का वर्गीकरण

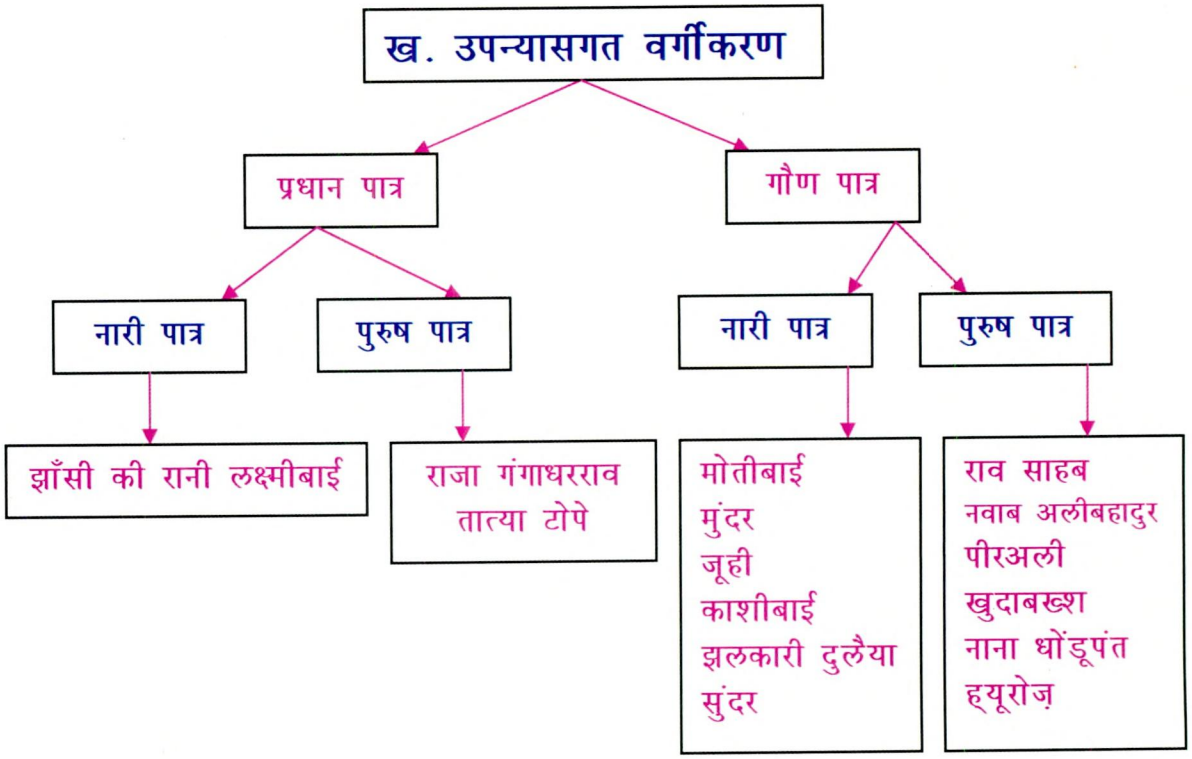

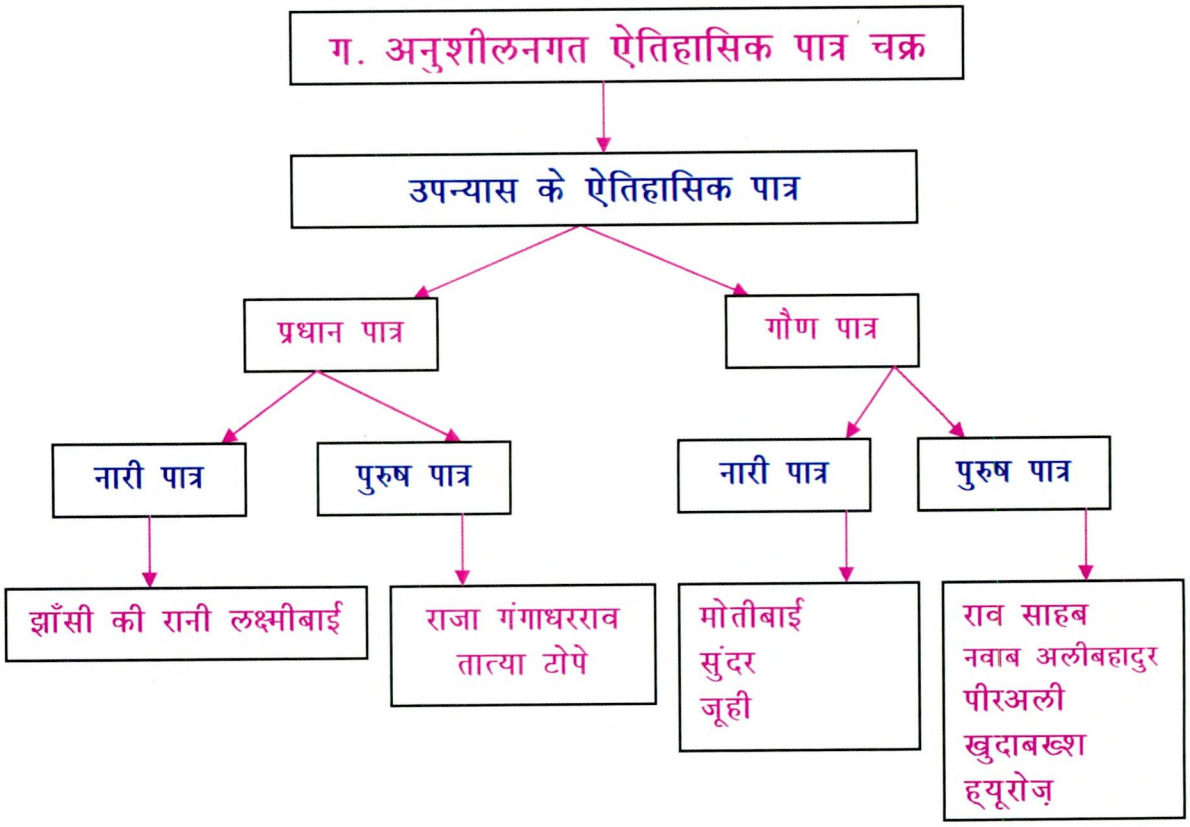

शेष पात्रों का स्वरूप उपन्यास में स्पष्ट नहीं हो पाया है, उल्लेख मात्र है। अतः अध्ययन क्रम में छोड़ दिया गया है। उक्त उल्लिखित पात्रों का ही अनुशीलन यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

2.1. 'झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई' के प्रमुख स्त्री पात्र

(i) झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई :

लक्ष्मीबाई का निर्माण विधाता ने अद्वितीय रूप के साथ बुद्धि–कौशल तथा वीरत्व के सफल संयोग से किया है जिसमें शौर्य और सौन्दर्य का सफल संतुलन भी है। उसके एक–एक शब्द से अंगार और तेज झरते हैं, आकृति और रूप शोभा, फूलों को लज्जित करती और बुद्धि और ज्ञान के संधान से जीवन के प्रकाश की दीप्ति फूटती है। उदारता और सहानुभूति की महानता जीवन को प्रकाश–पुंज मार्ग का दिशा–निर्देश करती है। उसके बाल्यकाल की आकृति में संस्कार और वातावरण आवश्यक तत्व हैं। बचपन तेज, ओज और उमंग से ओत–प्रोत है, शादी के पश्चात् उसमें गाम्भीर्य तथा परिस्थितिवश सर्वग्राही प्रबल है – वह संयम से परिस्थिति के चक्र को सहती है और वातावरण तैयार करती है, क्षेत्र निर्माण करती है।

रानी के चरित्र को तीन भागों में विभक्त कर सकते हैं। 1. बाल्यकाल से परिणय संस्कार के पूर्व तक (लगभग 13–14 उम्र) 2. शादी से गंगाधरराव (पति) की मृत्यु तक (लगभग 18 वर्ष उम्र) 3. वैधव्य आरम्भ से रानी की मृत्यु तक।

बचपन की मनू वाचाल, निड़र, कष्ट सहिष्णु है। नाचने–गाने के विपरीत उसे घोड़े की सवारी, मलखंभ–कुश्ती में रुचि है। उसका तेज तभी से प्रकट होने लगता है। उसे छबेली नाम से चिढ़ है। दुर्गाबाई, अहिल्याबाई, ताराबाई आदि वीर ललनाओं की कहानियाँ सुनना उसे पसंद है। नाना साहब के घायल होने पर शीघ्रता से घोड़े से कूदकर उसे अपने घोड़े पर बिठाकर थामकर ले आती है। उसे आश्चर्य होता है – 'इतनी जरा सी चोट पर ऐसी घबराहट और रोना और

पीटना' और जब मोरोपंत (पिता) कहते हैं – 'नहीं मनू। पर वह तो बालक है।' तो वह दृढ़ता से कहती है – 'बालक है। मुझसे बड़ा है। मलखंभ और कुश्ती करता है। बाला गुरु उसको शाबाशी देते हैं। अभिमन्यु क्या इससे बड़ा था।' बाल्यकाल की यही भावना उसके समग्र चरित्र का मूलाधार है।

किन्तु विवाहोपरान्त उसके जीवन में एकदम परिवर्तन हो जाता है। बचपन की मनू–लक्ष्मीबाई गंभीर हो जाती है। वह अँग्रेज़ों की कपट–नीतियों, देश की दासता, परिस्थितियों, नैराश्यजनित वातावरण को समझती है। उदार है, राजनीति में दक्ष है। उसमें संगठन की अद्‌भुत शक्ति है, अँग्रेज़ों की कुचालों के प्रति उसके मन में रोष जन्म लेता है, जो उनकी दासता की बेड़ियों को उतार फेंकने की अकुलाहट में बदलता जाता है। इसके लिए देश के छोटे–से–छोटे वर्ग के व्यक्ति के सहयोग की आवश्यकता है। राजा गंगाधरराव यह सब नहीं समझते। वे परिस्थितिवश यह मान बैठते हैं कि अँग्रेज़ों की शक्ति के आगे संघर्ष व्यर्थ है और देश की जो स्थिति है वही ठीक है। किन्तु रानी को यह स्वीकार्य नहीं।

राजा की नाच–गान तथा नाटकशाला में रुचि, हृदयेश और पजनेश की कविताओं में नारी के नख–शिख, नायिकाभेद का वर्णन उसे पसंद नहीं। तभी समय–समय पर वह राजा से व्यंग्य करती है। ऊँच–नीच का उसमें कोई भेद नहीं। अपनी दासियों तक से स्पष्ट कहती है – ''मेरी दासी कोई न हो सकेगी। मेरी सहेली होकर रहेंगी।''★ *(झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई, वृंदावनलाल वर्मा, प्रभात प्रकाशन, पृ. 49)*

उसके चरित्र में गरिमा है। बाला गुरु से शिक्षा प्राप्त करने में संकोच करती स्त्रियों से रानी मन की दृढ़ता के बारे में समझाते हुए कहती है कि स्त्रियाँ दृढ़ता का कवच पहने तो फिर संसार में ऐसा पुरुष कोई हो ही नहीं सकता जो उनको लूट ले। वह गंगाधरराव के झक्कीपन, पुरातन–पंथी प्रकृति से अपरिचित नहीं। तीर्थयात्रा में जाने के लिए भी वह घोर पर्दे में जाना स्वीकारती है। किंतु

पति के उग्र एवं विरोधी प्रकृति का होते हुए भी उसके पातिव्रत्य में कहीं कमी नहीं। उसमें सूक्ष्मपारखी दृष्टि है। आनंदराय की अवहेलना जैसी छोटी से छोटी घटना उसे याद रहती है।

रानी के जीवन का एक आध्यात्मिक पक्ष भी है। बचे हुए समय में वह धर्मग्रंथों का नियमपूर्वक पारायण करती है। भगवद्गीता पर उसकी परम श्रद्धा है। बचपन की चपल, वाचाल मनु समय–समय पर अपनी सखियों, झाँसी की स्त्रियों, युद्धक्षेत्र में अपने सैनिकों को गीता के अमर संदेश से उद्बोधन करती रहती है।

रानी के जीवन का तीसरा चरण पुत्र–प्राप्ति और उसके काल–कवलित हो जाने पर नैराश्य और शोक से भरे वातावरण से प्रारंभ होता है। जहाँ एक ओर अँग्रेज़ों ने झाँसी पर आधिपत्य कर लिया है, नाना साहब भी अँग्रेज़ों द्वारा पिस गये हैं। रानी झाँसी ही नहीं समूचे भारत में (कम से कम उत्तर भारत में) अँग्रेज़ों की परतंत्रता के जुए को उतार फेंकने के लिए सम्पूर्ण देश में क्रांति और युद्ध की आग फूँकती है। किन्तु भावी परिस्थितियों को देखते हुए एकदम विद्रोह नहीं करती। दिल्ली के बादशाह सहित सभी को अँग्रेज़ों के दमन–चक्र, अत्याचारों के विरुद्ध संगठित करती है। उसकी कल्पना में देश के स्वराज्य का स्वप्न है। उसका स्वप्न महान है, और वह इसी स्वप्न को साकार करने में वीरता और अदम्य उत्साह से युद्ध करती हुई राष्ट्रहित अपने प्राणों का उत्सर्ग कर देती है, वीरगति को प्राप्त करती है।

अतएव लक्ष्मीबाई को हम सुंदर, बलिष्ठ, निर्भीक, प्रसन्नमुख और साक्षात् दुर्गा के रूप में देखते हैं। प्राचीन महापुरुषों के प्रति श्रद्धावान्, भगवान में अनन्य प्रेम, साहसी, समता भाववाली, अस्त्र–शस्त्र संचालन में पटु, दार्शनिक, निरभिमान, विलक्षण बुद्धि, विनोदप्रिय, ऊँच–नीच के व्यवहार से मुक्त और प्रजा–वत्सल पाते हैं। उसमें अनन्य देशप्रेम है। वह गार्डन

से कहती है – ''मैं अपनी झाँसी नहीं दूँगी।'' राजा गंगाधरराव भी रानी की बड़ी प्रशंसा करते हैं। जनता में जनार्दन का भाव रानी में दिखाई देता है। हिन्दू–मुस्लिम सभी के लिए रानी के मन में समान आदर है। सागरसिंह जैसे डाकू और गुलमुहम्मद जैसे पठान उसके प्रेम के वशीभूत है। एक बार उसके मन में कमजोरी अवश्य आती है जबकि बारूद की कोठरी में जाकर आत्महत्या की भावना जन्म लेती है, अन्यथा रानी किसी से पुरुषत्व में कम नहीं। संक्षेप में कहा जा सकता है कि रानी का पात्र समस्त मानवीय मूल्य एवं पुनीत तत्वों के संयोजन से बना है और इसी महानता के कारण सम्पूर्ण जनता, सभी बड़े–छोटे तात्या और नाना जो उम्र में उससे बड़े थे उसकी चरण रज सिर पर चढ़ाते हैं। हिन्दू–मुसलमान उसके एक संकेत पर प्राण–समर्पण करने को तैयार रहते हैं। निश्चय ही रानी का असाधारण व्यक्तित्व है।

2.2. 'झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई' के प्रमुख पुरुष पात्र

(i) राजा गंगाधरराव :

राजा गंगाधरराव शिवराव भाऊ के लड़के थे। रघुनाथ राव की मृत्यु के बाद वे झाँसी की गद्दी के दावेदार हुए, उनका राज्याभिषेक बड़ी धूमधाम से हुआ। पर राज्य के कुप्रबंध और ऋण के कारण सन् 1839 ई. में झाँसी राज्य कोर्ट में चला गया। केवल नगर का शासन उनके अधीन था। शेष राज्य कंपनी के द्वारा शासित था।

गंगाधरराव की कला और साहित्य में विशेष रुचि थी। संगीतज्ञों और कवियों का आदर करते थे। नाटकों में उनकी इतनी अधिक रुचि थी कि स्वयं भी अभिनय किया करते थे। वे विद्या व्यसनी भी थे। हस्तलिखित ग्रंथों से उनका ग्रंथालय भरा हुआ था। स्वभाव से वे सहज कोपी और कुछ–कुछ झक्की थे। खुदाबख्श को उन्होंने इसी स्वभाव के कारण सहज ही देश निकाला दे दिया था।

राजा गंगाधरराव का शासन कठोर था और दंड विधान भी अति कठोर था। बिच्छु से कटवाना, कट्टे में पैर डालकर भाँजना आदि। जनेऊ विवाद में लोहे का, गरम तार का जनेऊ दोषी को उन्होंने पहनवा दिया था। इसी प्रकार नारायण शास्त्री और छोटी के विवाद में उन्हें देश निकाले का दंड दिया था। उन्होंने चोर और डाकू का भी कठोरता से दमन किया। वे विधुर थे। उनकी चालीस वर्ष की अवस्था थी। तब उनका विवाह 13 वर्षीय मनू के साथ हुआ। विवाह के पश्चात् उन्हें पूरे शासनाधिकार मिल गए और अँग्रेज़ों से हुई सहायक संधि के अनुसार रखी गई सेना के व्यय के लिए उन्हें 2 लाख 27 हजार 458 रुपये की वार्षिक आय का इलाका अँग्रेज़ों को देना पड़ा।

पत्नी लक्ष्मीबाई से उनका स्वभाव मेल नहीं खाता था। तब भी उनका दांपत्य दुखी नहीं था। 1850 ई. में प्रयाग, काशी और गया की तीर्थ यात्राएँ की और कंपनी से प्राप्त 30 लाख रुपयों का अपव्यय किया। फिर भी उन्हें अपने देश के प्रति स्वाभिमान और प्रेम था। अपने इसी स्वाभिमान की चर्चा गार्डन से करते हुए वे देशी पंचायत और न्याय–व्यवस्था के महत्व का प्रतिपादन करते हैं।

गंगाधरराव हिंदुस्तानियों की निर्बलताओं से परिचित थे। रानी लक्ष्मीबाई से इसकी चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि हमारे यहाँ फूट है, गाँव में उपद्रवी, डाकू और बटमार भरे हुए हैं। अँग्रेज़ों के पास हथियार अच्छे हैं इसलिए उन्होंने राज्य कायम कर लिया। सेना को तैयार करने और वीरों को प्रोत्साहित करने में भी वे तत्पर थे। वे अँग्रेज़ों की नीति समझते थे परंतु अपनी तथा देश की कमज़ोरियों से परिचित थे। इसीलिए अँग्रेज़ों को सहायता देने और लेने में हिचकते न थे। सन् 1851 ई. में उनको पुत्र–रत्न प्राप्त हुआ। पर पुत्र की आकस्मिक मृत्यु हो जाने पर उन्हें गहरा आघात लगा और वे बीमार रहने लगे, तब उनकी सनकें और कठोरता कुछ कम हो गई थीं। जब उनका स्वास्थ्य नहीं सुधरा, तब उन्होंने

दामोदरराव को दत्तक ले लिया और एक खरीता इस हेतु लिखकर एलिस के हाथों कंपनी सरकार के पास दत्तक स्वीकृति के लिए पहुँचाया। अंतिम समय तक उन्हें झाँसी के राज्य और अपने उत्तराधिकार की चिंता थी।

राजा गंगाधरराव रानी की महानता को हृदय से समझते थे, इसीलिए रानी के प्रति उनका आचरण कटु न हुआ। वे उसे महान समझते रहे जैसा उन्होंने मृत्यु के समय स्पष्ट प्रकट भी किया है। उनका दाम्पत्य जीवन साधारण और सुखी कहा जायेगा। परंतु प्राचीन विचार रखने के कारण उन्होंने रानी का पूर्णतया बंधनहीन एवं मुक्त विचरण स्वीकार नहीं किया। **फिर भी कुछ सीमा तक वे प्रगतिशील विचार रखते थे जैसे कट्टर पंथियों पर नज़र रखना। वे नारी की पूर्ण स्वतंत्रता के पूर्ण पक्षपाती नहीं थे। इसीलिए किले के अंदर ही घुड़सवारी, कुश्ती आदि पसंद करते थे। वे अपराधियों के प्रति अत्यंत क्रूर और कठोर थे। इस प्रकार इनका सारा चरित्र स्वाभाविक, वातावरण की उपज है।**

(ii) तात्या टोपे

तात्या टोपे पेशवा बाजीराव द्वितीय का सेवक था। वह बिठूर में बाजीराव के बाला गुरु के अखाड़े का प्रधान एवं एक ब्राह्मण युवा था। रानी लक्ष्मीबाई के साथ बचपन में खेला था। रानी लक्ष्मीबाई के विवाह की व्यवस्था करने के लिए वह झाँसी आया था। राजा गंगाधरराव के दरबार में उसके समक्ष ही जनेऊ–विवाद और नारायण शास्त्री–छोटी विवाद के निर्णय हुए थे। झाँसी का वातावरण उसे प्रिय लगा। स्वतंत्रता संग्राम में योजनाओं के संबंध में मंत्रणा करने और देश का समाचार देने के लिए वह अनेक बार रानी लक्ष्मीबाई से मिलने झाँसी आया। रानी की अधीनता में एक सेनापति–सा कार्य करता है। उसे रानी के विवेक और तेज का भरोसा था। वह अँग्रेज़ों की सैनिक चालों को भी खूब समझता था। उस स्थिति में स्वराज्य के संबंध में उसके सुलझे हुए विचार थे।

तात्या टोपे मूल में रूखी और खटी प्रकृति का एक सैनिक ही है। अपने लक्ष्य की पूर्ति करने में वह खोया रहता है। जूही उसकी ओर आकृष्ट हुई, पर उसने उसके साथ बहुत थोड़ा–सा प्रेम का व्यवहार किया, वह भी राजनैतिक दृष्टि से, मोतीबाई के कहने से। उसके पास इन बातों के लिए अवकाश नहीं है। झाँसी पर अँग्रेज़ों के आक्रमण की सूचना काशीबाई और जूही के माध्यम से मिलते ही वह आया और बेतवा नदी के तट पर मोर्चा जमाया। पर उसे अंत में परास्त होकर लौटना पड़ा। यद्यपि वह असाधारण सेनापति था पर उसका अनुशासन अस्त–व्यस्त था। उसके कुछ स्वभावगत दोष भी थे। वह सैनिकों के व्यसनों को क्षमा करता रहता था और राव साहब की आज्ञाओं को आँख मूँद के पालन करता था।

राव साहब की आज्ञा पर उसने कालपी में जूही को नृत्य करने का आग्रह किया जिससे जूही के हृदय में गहरा आघात लगा। ग्वालियर पर आक्रमण के अवसर पर वह अपनी सेना को दो भागों में विभक्त करके आगे बढ़ा, उसे देखकर सिंधिया के सैनिकों ने बिना लड़े मैदान खाली कर दिया।

ग्वालियर विजय के पश्चात् जब राव–साहब राग–रंग में डूब गए, तब उसकी दबी वासनाएँ भी उभर आईं। वह नर्तकियों के नृत्य को नेत्र गड़ा–गड़ा कर प्रशंसा के भाव से देखने लगा। रोज के आक्रमण पर राव साहब ने रानी के पास उसे भेजा। ग्वालियर की हार और लक्ष्मीबाई की मृत्यु के पश्चात् भी वह बहुत दिनों तक अँग्रेज़ों से लड़ता रहा, उन्हें छकाता रहा। **इस प्रकार वह कर्तव्यपरायण, स्वामिभक्त, वीर योद्धा और स्वतंत्रता पर बलिदान होने वाले सैनिक के रूप में चित्रित किया गया है।**

2.3. 'झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई' के गौण स्त्री पात्र

(i) मोतीबाई :

मोतीबाई राजा गंगाधरराव के नाट्यशाला की प्रतिभा संपन्न सुंदर अभिनेत्री थी। गंगाधरराव उसके प्रति आकर्षित थे, किंतु उसका झुकाव खुदाबख्श की ओर था। वह 'शकुंतला' और 'रत्नावली' की भूमिका निभाती थी। 'शकुंतला' का भावपूर्ण कुशल अभिनय देखकर राजा ने उसे एक बड़ा बाग जागीर में दिया था, पर साथ ही खुदाबख्श को देश निकाला देकर मोतीबाई के दिल में एक घाव भी कर दिया था। गंगाधरराव की मृत्यु के पश्चात् वह रानी लक्ष्मीबाई के पास आने–जाने लगी। उसकी स्वामिभक्ति की परीक्षा लेने के पश्चात् रानी ने उसे जासूसी विभाग की अध्यक्षा बना दिया।

अली बहादुर ने उसे मिलाने का प्रयत्न किया, पर वह अपनी राजभक्ति और देश भक्ति से न स्वयं डिगी और न ही खुदाबख्श को ही डिगने दिया। उसने स्वराज्य प्राप्त करने के पश्चात् ही विवाह करने का संकल्प लिया। सागर सिंह के दमन हेतु वह रानी के साथ बरूआ सागर गई। वहाँ घायल खुदाबख्श की सेवा–सुश्रुषा उसने की। अँग्रेज़ों के आक्रमण के समय उसने स्त्री तोपची का कार्य बड़ी कुशलतापूर्वक किया। उसका महत्व इसी से जाना जा सकता है कि जनरल ह्यूरोज ने अपने आत्म समर्पण करवा देने वाले पत्र में, अधिकारियों की सूची में उसका नाम भी 'मोती साई' के रूप में लिखा था।

मोतीबाई ने पीरअली की गद्दारी के प्रति रानी को सजग किया था। ओरछा फाटक की स्थिति और वहाँ से उठते हुए लाल झंडे को दूरबीन से देखकर वह रानी से आज्ञा लेकर वहाँ की स्थिति संभालने चली गई थी। किंतु सैयद फाटक में खुदाबख्श से मुलाकात होने पर उसने इसे रोक लिया। देश के लिए न्यौछावर हो जाने की उसकी बात सुनकर मोतीबाई हमेशा के लिए उसकी हो

जाने की बात उसने खुदाबख्श से कह दी। खुदाबख्श जब मारा गया तब मोतीबाई वहाँ पहुँचकर रामचंद्र देशमुख के घोड़े पर उसकी लाश लादकर किले में जा पहुँची। अंत में रानी की आज्ञा पर तोप चलाने बुर्ज पर पहुँची। वहीं तोप चलाते एक गोली उसके कँधे को फोड़ती हुई निकल गई। वह घायल अवस्था में रानी के पास लाई गई और रानी की ही गोद में उसका प्राणांत हो गया। **इस प्रकार एक नर्तकी से वीरांगना के रूप में उसका चरित्र विकसित करते हुए वर्माजी ने देश पर न्योछावर हो जानेवाली नारी के रूप में उसका चरित्रांकन किया है।**

(ii) मुंदर :

मुंदर कुणमति जाति की मराठा लड़की और रानी की दासी थी। उसे तलवार चलाना और घोड़े की सवारी आती थी। रानी ने इसे अपनी सहेली के रूप में स्वीकार किया था। वह सदैव रानी के साथ रहती थी और काशी और सुंदर के साथ–साथ अस्त्र–शस्त्र चालन, मल्ल विद्या आदि रानी लक्ष्मीबाई से सीखती थी। दीवान रघुनाथसिंह से इसका प्रणय संबंध था। नत्थे खाँ को पीछे से आक्रमण करके जब रघुनाथसिंह ने हरा दिया, तब रानी लक्ष्मीबाई ने पुरस्कार स्वरूप इसी के हाथों रघुनाथसिंह को लड्डू खिलवाए थे। अँग्रेज़ों के आक्रमण के समय वह रघुनाथ सिंह के साथ–साथ तोपखाने में तोपची का कार्य करती थी। दोनों ने ही देश पर न्योछावर हो जाने का संकल्प लिया था।

मुंदर में पर्याप्त शारीरिक शक्ति थी। वह तीनों सहेलियों से घुड़सवारी में अधिक तेज थी। उसका संकल्प था कि जब सरकार (रानी लक्ष्मीबाई) स्वराज्य स्थापित कर चुकेंगी तभी वह विवाह के विषय में सोचेगी। 18 जून अंतिम युद्ध में रानी के लिए उसने सिंधिया के अस्तबल से घोड़ा लाकर दिया। उस दिन उसे

अपनी मृत्यु का आभास था। रानी के साथ अंतिम युद्ध करते–करते उसने वीरगति पाई। रघुनाथसिंह ने रानी लक्ष्मीबाई के साथ ही साथ बाबा गंगादास की कुटी में उसका भी दाह–संस्कार कर दिया। **इस प्रकार मुंदर का पात्र कर्मठ नारी एवं स्वदेश प्रेमी के रूप में चित्रित किया गया है।**

(iii) जूही :

जूही गंगाधरराव के नाट्यशाला की 14 वर्षीय अल्प वयस्का नर्तकी थी। रंगमंच पर उसका नृत्य और गायन अधिक होता था और अभिनय कम। वह मोतीबाई के जासूसी विभाग में आगे चलकर सम्मिलित हो गई। अँग्रेज़ छावनी में जा–जाकर नृत्य और गान के माध्यम से जासूसी करती और सैनिकों को भड़काती थी। तात्या टोपे के प्रति उसका अनुराग था।

झाँसी पर ह्यूरोज के आक्रमण पर वह काशीबाई के साथ संदेश लेकर तात्या टोपे के पास कालपी पहुँची थी। कालपी में जब तात्या टोपे ने राव साहब के कहने पर उसे नृत्य करने का आग्रह किया, तब यह सुनकर उसका कोमल हृदय चूर–चूर हो गया। उसने उसके आग्रह को ठुकरा दिया। ग्वालियर पर अँग्रेज़ों के आक्रमण के अवसर पर उसने तोपों का बड़ी ही कुशलता से संचालन किया और वहीं शत्रु की तलवार से युद्ध स्थल में उसने वीरगति प्राप्त की। **इस प्रकार उसका चरित्र सुंदरी, नृत्य–गान में पारंगत, राष्ट्रभक्त सैनिक, कुशल अश्वारोही और कुटिल राजनीतिज्ञ के रूप में चित्रित किया गया है।**

2.4. 'झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई' के गौण पुरुष पात्र

(i) राव साहब :

राव साहब नाना धोंडूपंत का छोटा भाई था। वह भी बिठूर में ही नाना के साथ बाजीराव द्वितीय के पास रहता था। वहीं मनू और नाना के साथ खेलता,

कूदता, पढ़ता हुआ बड़ा हुआ। गंगाधरराव की मृत्यु पर नाना के साथ झाँसी आया था। स्वतंत्रता समर में अपनी सेना लेकर कालपी पहुँच गया था। तात्या टोपे उसका विश्वास–पात्र अनुचर था, जिस पर उसका बड़ा स्नेह था। उसका अपना कोई वर्चस्व नहीं था। स्वभाव से वह सहज संतोषी और परम महत्वकांक्षी था। उसकी लोकप्रियता, उसकी उदारता, शिथिलता, सहसावर्ती स्वभाव के कारण थी। उसमें सेनापति के रूप में आज्ञाओं का पालन कराने की क्षमता नहीं थी। स्वयं निर्णय लेने और उसे क्रियान्वित करने की क्षमता उसमें नहीं थी। ग्वालियर में उसने अपना राज्याभिषेक कराया और अष्ट–प्रधान की नियुक्ति की। तात्या टोपे को अपना प्रधान मंत्री बनाया। 20 लाख रुपये फौजियों में बाँटें और नाच रंग एवं उत्सव मनाने में मग्न हो गया। उसकी अकर्मण्यता, मूर्खता एवं विलासप्रियता के परिणाम स्वरूप ही ग्वालियर पर अँग्रेज़ों का आक्रमण हो गया और रानी लक्ष्मीबाई एवं तात्या टोपे जैसे कुशलतम सेनापति और ग्वालियर जैसे किले के होते हुए भी उसकी पराजय हुई। **एक मूर्ख, व्यसनी, विलासप्रिय, भंग पीनेवाले, अयोग्य सेनापति के रूप में उसके चरित्र का चित्रण हुआ है।**

(ii) नवाब अलीबहादुर :

नवाब अलीबहादुर के पिता रघुनाथराव थे और उनकी माता का नाम लच्छो था जो एक मुसलमान वेश्या थी। उनकी जागीर की जब्ती तो उसी समय हो गई थी जब उनके पिता जीवित थे और राज्य कोर्ट कर लिया गया था। उन्हें 500 रुपये मासिक पेंशन दी जाने लगी। राजा गंगाधरराव के शासन में इन्होंने प्रयत्न किया कि पेंशन बढ़ जाए और जागीर वापस मिल जाए, पर राजा ने पोलिटिकल एजेंट से बात करने की बात कहकर इन्हें टाल दिया। राजा के इस व्यवहार से अलीबहादुर को धक्का लगा और वे ऊपर से प्रसन्न और भीतर से उदास रहने लगे।

वे खुदाबख्श से मोतीबाई की स्थिति जानकर उसे अपनी शतरंज का मोहरा बनाना चाहते थे। उसके द्वारा अँग्रेज़ सरकार को अर्जी दिलवाना चाहते थे। ऐलिस से उनकी मित्रता थी पर अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए उसकी खुशामद तक करने में नहीं हिचकते। जागीर की वापसी और राजा गंगाधरराव द्वारा छीना गया पिता रघुनाथराव वाला महल प्राप्त करने की कोशिश में संलग्न थे। ऐलिस ने उनके स्वार्थ को परख लिया और रानी पर जासूसी कार्य करने के लिए उन्हें हथिया लिया। वे बेझिझक कंपनी के प्रति अपनी वफादारी व्यक्त करते हैं जिस रानी ने उन्हें झाँसी में रहने की आज्ञा दे दी है उसी के विरुद्ध कार्य करते हैं।

पीरअली से उन्हें झाँसी के समाचार मिलते रहते थे, उन्हें वे अँग्रेज़ों के पास भेजते रहे। मात्र अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए वे देश से गद्दारी करते रहे। **यद्यपि उनके साथ राज्य की ओर से अन्याय होता रहा, उनके जागीर प्राप्ति प्रयत्नों को अनुचित नहीं कहा जा सकता, किंतु अँग्रेज़ों से मिलकर रानी के हितू बने हुए उन्होंने जो भूमिका निबाही है निश्चित ही वह उनके चरित्र को कलंकित करती है।**

(iii) पीरअली :

पीरअली एक कुटिल चरित्र का मुसलमान था। वह अलीबहादुर के भरोसे का सेवक था। उन्होंने रानी पर जासूसी कार्य करने के लिए इसे नियुक्त किया था। वह अँग्रेज़ों का तरफदार है। अपने को रानी का शुभ चिंतक बतलाकर, सैनिकों से मिलकर, महल के कुछ भाग में आग लगवा देता है और साधारण–सी संपत्ति लुटवाकर अपना नाम नत्थे खाँ की फौज के विरुद्ध लड़नेवालों में लिखवा लेता है। जवाहरसिंह और काशीनाथ ने उसका विश्वास दिलाया और वह शीघ्र ही रानी के विश्वासपात्र लोगों की श्रेणी में आ गया। वह अत्यंत कुटिल जासूस है। जासूसी के हथकंडों से पूर्ण परिचित है। अँग्रेज़ों के आक्रमण पर रानी की अनुमति लेकर अँग्रेज़ों की छावनी में जाता है और वहाँ वह जनरल

ह्यूरोज़ को झाँसी की सारी गुप्त बातें बतला देता है। **इस प्रकार वह सच्चा स्वामिभक्त है और पक्का जासूस भी। अपने संकल्प के अनुरूप अड़िग रहकर कार्य करने की उसमें क्षमता है, पर इसकी धूर्तता और देशद्रोह इन सबके ऊपर है।**

(iv) खुदाबख्श :

खुदाबख्श एक ईमानदार, धर्मभीरु मुसलमान था। मोतीबाई के प्रति उसका आकर्षण देखकर, 'शकुंतला' नाटक में उसकी वाह–वाह सुनकर और बाद को की गई चर्चाओं के कारण राजा गंगाधरराव ने अपनी ईर्ष्या और क्रोधी स्वभाव के वशीभूत उसे देश निकाले की सजा दी थी। तब भी खुदाबख्श के मन में झाँसी राज्य या झाँसी राजा के प्रति कोई दुर्भावना नहीं थी।

मोतीबाई ने उसे रानी के विश्वासपात्रों की सूची में स्थान दिलवा दिया। वह मोतीबाई के प्रेम और रूप का भिखारी था। सागरसिंह डाकू के दमन के लिए वह गया था और वहाँ घायल हो गया। उसकी वीरता पर रानी ने उसे 'कुँवर' की उपाधि दी। अँग्रेज़ों के आक्रमण के समय वह सेयर फाटक पर तैनात था। वहाँ से ओरछा फाटक से झाँसी में प्रवेश करती अँग्रेज़ी सेना पर तोप के गोलों से भयंकर मार की। वहीं मोतीबाई से उसकी आखिरी मुलाकात हुई। अंत में एक गोली लगने से उसका प्राणांत हो गया। मोतीबाई उसकी लाश उठाकर किले में लाई। वहीं वह दफनाया गया और किले में ही उसकी कब्र बनाई गई। बाद को मोतीबाई की कब्र भी उसके निकट ही बनाई गई थी। **इस प्रकार खुदाबख्श का चरित्र एक ईमानदार, धर्मपरायण, देश पर शहीद होने वाले 'मुस्लिम पात्र' के आदर्श को व्यक्त करने वाला है।**

(v) जनरल ह्यूरोज :

सन् 1858 ई. में विप्लव को दबाने के लिए जनरल रोज इंग्लैंड से भारत में आकर बंबई में उतरा। उसने अपनी अधीन सेना के दो भाग किए, एक भाग

मऊ छावनी की ओर भेजा और दूसरे भाग का नेतृत्व करता हुआ वह सागर की ओर बढ़कर उस पर विजय प्राप्त की। वहाँ कैद अँग्रेज़ों को उसने छुड़ाया। 2 मार्च 1858 ई. को उसने झाँसी की ओर कूच किया और उसकी सेना ने तालबेहट पर अधिकार कर लिया। इसके पूर्व उसने सेना के कई भाग करके आसपास के विप्लवों के केंद्रों को दबाने भेज दिया था। पीरअली उससे आकर मिला। उससे उसने झाँसी के हालचाल जान लिए। तभी प्रधान सेनापति केंपबेल ने तात्या तोपे के चरखारी पर हुए आक्रमण के अवसर पर प्रथम उसे सहायता करने हेतु ह्यूरोज को आदेश दिया, पर उसने उक्त आज्ञा नहीं मानी, क्योंकि उसकी दृष्टि में झाँसी का महत्व बहुत अधिक था।

युद्ध के अवसर पर रानी की रणकुशलता और स्त्रियों की सेना देखकर वह दंग रह गया। अंत में दूल्हाजू को मिलाकर उसने किले का फाटक खुलवाकर नगर में प्रवेश कर लिया और इस प्रकार झाँसी पर विजय पाई। रानी की वीरगति का जब उसे समाचार मिला तो उसने कहा था, ''यह थी उनमें सर्वश्रेष्ठ और सर्वोत्कृष्ट वीर।''

3. 'मृगनयनी' में पात्र एवं चरित्र–चित्रण :

'मृगनयनी' वर्माजी का 482 पृष्ठीय उपन्यास है जो सन् 1950 ई. में प्रकाशित हुआ। इसकी पात्र योजना अत्यंत सुनियोजित है। इसमें 16 पुरुष पात्र और 6 नारी पात्र, कुल मिलाकर 22 पात्र हैं। इसमें कुछ पात्र अवश्य ऐसे हैं जिन्हें मात्र ऐतिहासिक विवरण की पूर्ति करने वाले, चरित्र का आभास देने या कथा–प्रवाह में गौण भूमिका निर्वाह करने मात्र के लिए नियोजित किया गया है। यथा–विवादी शास्त्री, काजी, नायकिन आदि। अतः अध्ययन की दृष्टि से सक्रिय भूमिका निर्वाह करने वाले ऐसे पात्रों पर यहाँ विचार किया जाएगा जो अपनी विशिष्टताओं के कारण अनिवार्य हैं। वे हैं :

'मृगनयनी' के पात्र

नारी पात्र	पुरुष पात्र
1. मृगनयनी – गूजर बालिका	1. मानसिंह – ग्वालियर का राजा
2. लाखी – अहीर बालिका	2. अटलसिंह – गूजर, मृगनयनी का भाई
3. कला – काल्पनिक नारी पात्र	3. गयासुद्दीन खिलजी – महमूद खिलजी का पुत्र
4. पिल्ली – नटनी	4. नसीरुद्दीन – गयासुद्दीन खिलजी का पुत्र
	5. सिकंदर लोदी – दिल्ली का सुल्तान
	6. महमूद बघर्रा – गुजरात का सुल्तान
	7. पोटा – नट

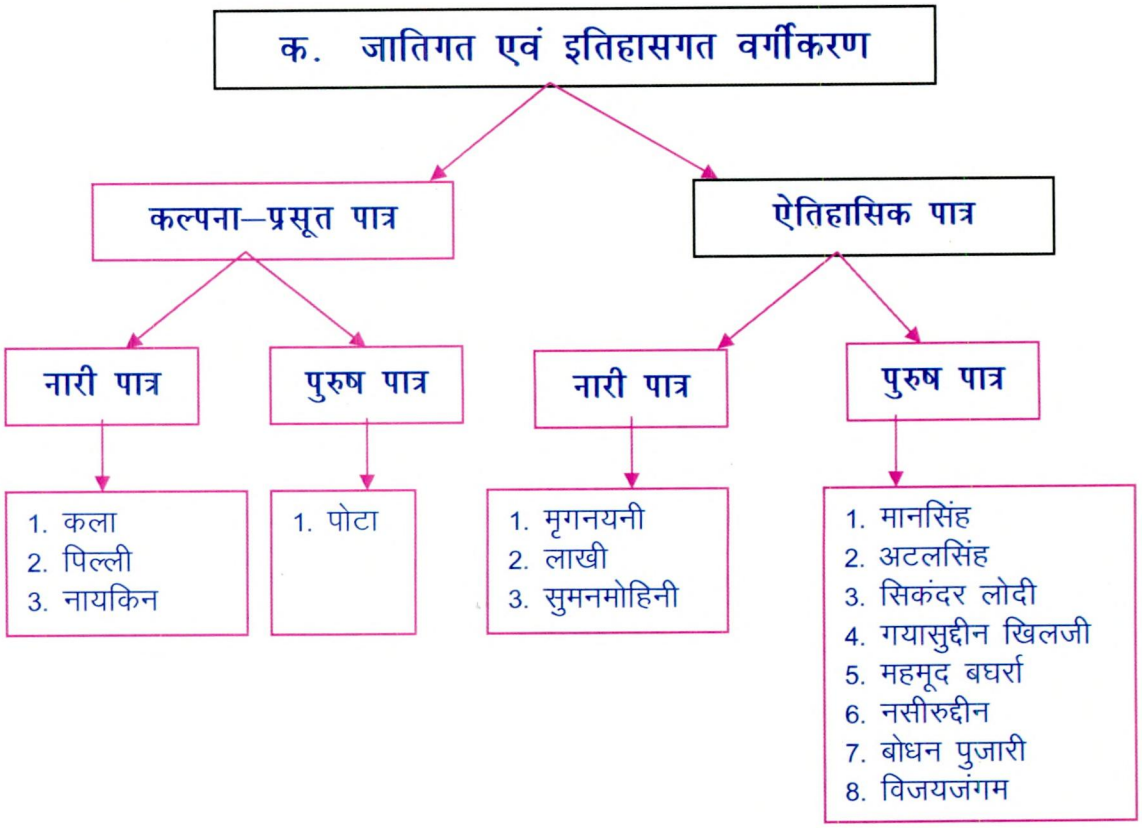

'मृगनयनी' के पात्रों का वर्गीकरण

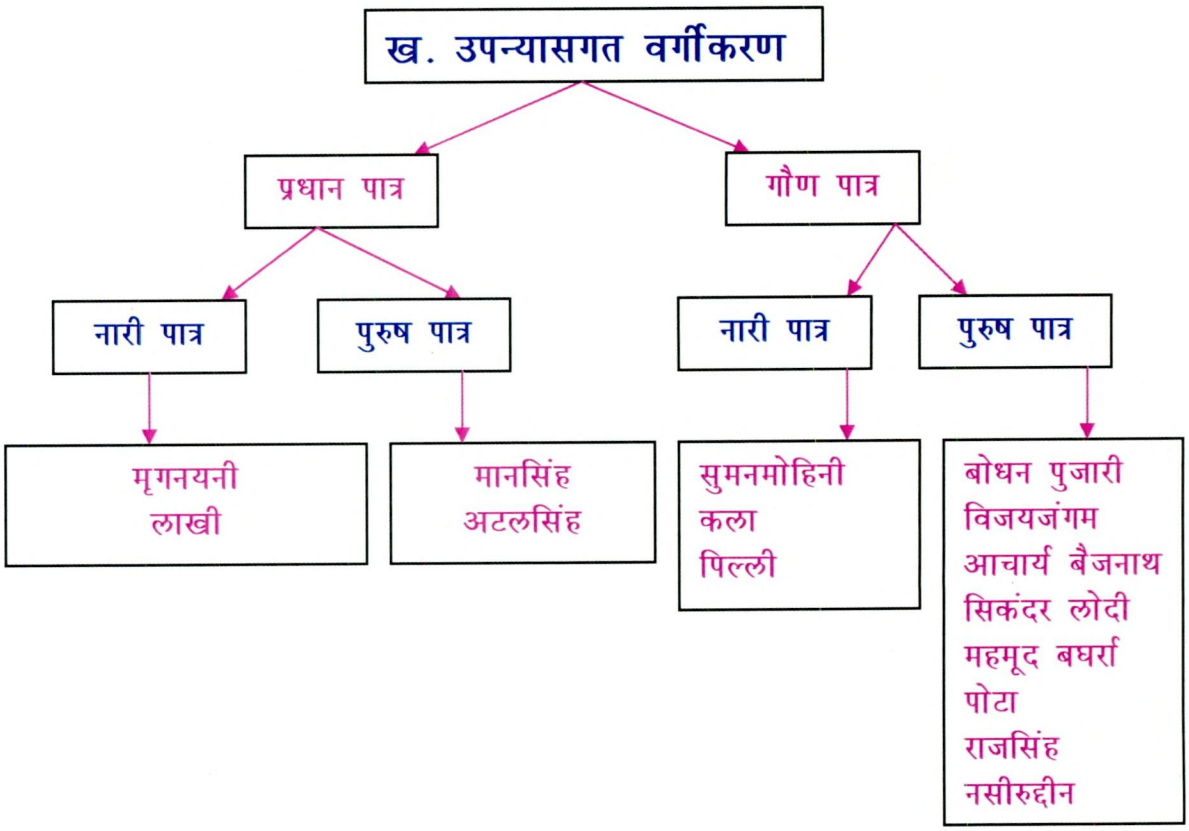

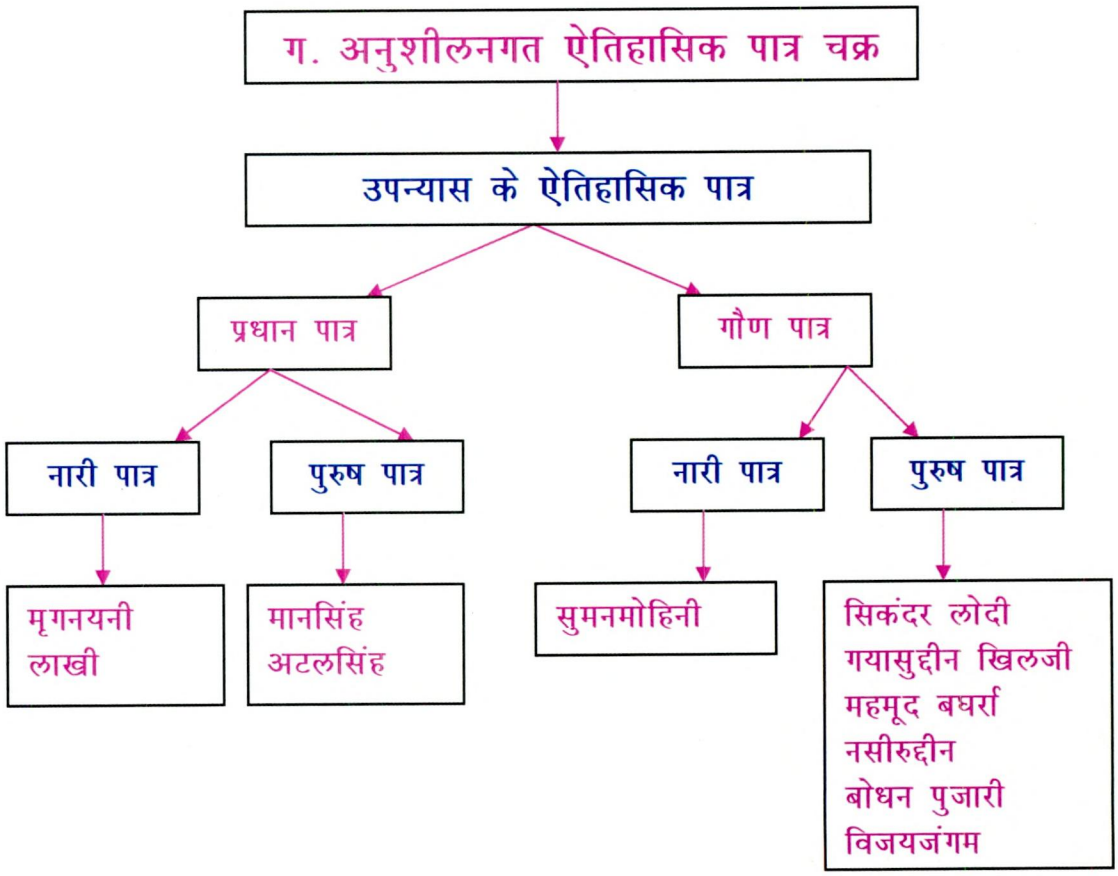

शेष पात्रों का स्वरूप उपन्यास में स्पष्ट नहीं हो पाया है, उल्लेख मात्र है। अतः अध्ययन क्रम में उन्हें छोड़ दिया गया है। उक्त उल्लिखित पात्रों का ही अनुशीलन यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

3.1. 'मृगनयनी' के प्रमुख स्त्री पात्र

(i) मृगनयनी :

'मृगनयनी' उपन्यास की प्रधान पात्र है। यह ग्वालियर के राई ग्राम की गूजर बालिका है। इसके माता–पिता सिकंदर लोदी के आक्रमण में मार डाले गये। बड़ा भाई अटल ही इसका संरक्षक है। उसके घर का नाम निन्नी है। उम्र 15–16 वर्ष की है। लाखी उसकी सहेली है। उसी के साथ होली खेलती है। भाई के साथ खेतों की रखवाली करने जाती है। वहाँ सूअर को एक ही तीर से निशाना साध मार गिराती है। उसकी शारीरिक क्षमता महान है। इस तरह एक सामान्य कृषक कन्या के रूप में उसका प्रारंभिक चित्रण हुआ है। एक ग्रामीण बाला की तरह उसकी प्रकृति सरल है। उसके असाधारण सौंदर्य और पराक्रम की चर्चा दूर–दूर तक फैल जाती है।

सुल्तान गयासुद्दीन की ओर से भेजे गए नटों के झुण्ड उसे लालायित करने का प्रयत्न करते हैं। वह किसी प्रलोभन में नहीं फँसती। गयासुद्दीन की ओर से लाखी ओर मृगनयनी को उठा ले जाने के लिए चार घुड़सवार सैनिक आते हैं। पर वह अपनी वज्रमुष्टि से चलाई बरछी के द्वारा उनके लौह कवच को भेदकर मार डालती है। उसके साहस और वीरता के चित्रण के साथ ही वर्माजी ने नारीगत कोमल हृदय का चित्र भी उसी क्षण खींचा है। उससे बरछी नहीं निकलती, मानवी खून की धारा को देखकर वह दूसरी ओर मुँह फेर लेती है, जबकि लाखी बेझिझक उसे निकाल देती है। यद्यपि वह लाखी से अधिक साहसी और शक्तिशाली है, पर लाखी से कहीं अधिक सलज्ज और कोमलता लिए हुए, नारी की गरिमायुक्त

उसका चित्र उपस्थित किया गया है। नटनी पिल्ली की बेशरमी और निर्लज्जता को देखकर वह सोचती है क्या स्त्रियाँ इतनी निर्लज्ज भी हो सकती हैं।

मृगनयनी के सौंदर्य और लक्ष्य भेद से आकर्षित होकर राजा मानसिंह बोधन के आमंत्रण पर आखेट के लिए राई गाँव में आते हैं। वे उसकी वीरता और सौंदर्य को प्रत्यक्ष देखकर मुग्ध होकर, वहीं रत्न–जटित स्वर्णहार उसे पहिना कर जीवन–संगिनी बनाने का प्रस्ताव रखते हैं। राई गाँव का पुजारी बोधन और मानसिंह की ओर से विजयजंगम द्वारा वहीं गाँव में ही विवाह कार्य संपन्न करा दिया जाता है। इसके पश्चात् वह ग्वालियर आती है तब उसे ज्ञात होता है कि मानसिंह की आठ रानियाँ और हैं, पर मानसिंह का उस पर सबसे अधिक स्नेह है। शिकार के अवसर पर ही उसने पर्दा नहीं करने पर, राई नदी से नहर काटकर ग्वालियर ले आने की बात, सहज ही उससे मानवा ली थी। उस अवसर पर एक ग्रामीण बाला और राजा के मध्य हुई वार्तालाप को वर्माजी ने बड़े ही सुसंतुलित रूप में चित्रित किया है।

मृगनयनी मानसिंह के हृदय पर अपने रूप और गुणों के कारण अक्षुण्ण स्थान बनाए रखती है। सुमनमोहिनी इन्हीं कारणों से उससे ईर्ष्या करती है। भोजन और पान में विष तक देने का प्रयत्न सुमनमोहिनी ने किया था, किंतु वह इतनी सहनशील और आदर्श नारी हो जाती है कि, मानसिंह को इसकी जानकारी तक नहीं होने देती। अपने स्वामी की प्रसन्नता के लिए वह सभी विधाओं में अपने को पारंगत बना लेने का संकल्प करती है। वह अपने इस संकल्प को पूरा करके ही चैन की नींद लेती है। बैजू से गायन और संगीत, कला से चित्रकला सीखकर, शीघ्र ही उसमें पारंगत हो जाती है। वह अटल और लाखी को ग्वालियर बुलाकर दोनों का विवाह संपन्न करवाती है। मानसिंह उसके लिए गूजरी महल का निर्माण

कराते हैं। वह प्रेरणामयी, कर्तव्य–पथ की ओर पति को सदैव अग्रसर करनेवाली पत्नी है।

जब सिकंदर लोदी पुनः आक्रमण करता है तब वह मानसिंह को देश की रक्षा करने और युद्ध की तैयारी करने की प्रेरणा देती है। वह स्वयं किले की रक्षा का भार ले लेती है। लाखी के बिछुड़ने और बाद में लाखी और अपने भाई अटल के वीरतापूर्ण बलिदान का समाचार सुनकर उसे बड़ा कष्ट होता है, फिर भी वह सह जाती है। राजसिंह और बालसिंह उसके दो पुत्र हैं, पर वह सुमनमोहिनी के पुत्र विक्रमादित्य को ज्येष्ठ होने के कारण युवराज बनाकर अपने विशाल हृदय का परिचय देती है।

ग्वालियर जब बाह्य आक्रमणों के भय से मुक्त हो जाता है और मानसिंह कला की एकांगिता में खोने लगता है तब वह एक चित्र बनाकर उसे दिखलाती है जिसमें कला और कर्तव्य के समन्वय पर बल दिया गया था। वह प्रजा के सुख और देश की स्वाधीनता की ओर मानसिंह को प्रेरित करती रहती है। इस प्रकार नारीत्व के आकर्षण से परिपूर्ण, एक पूर्ण स्वतंत्र व्यक्तित्व लिए, नारी का आदर्श, मृगनयनी के चरित्र में, शक्ति और सौंदर्य के पूर्ण समन्वय के साथ परिलक्षित होता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि मृगनयनी का चरित्र इस उपन्यास का जीवन है। वह इस ऐतिहासिक उपन्यास की नायिका है। उसी का चरित्र इस उपन्यास में सबसे अधिक प्रभावशाली बन पड़ा है। वह कर्तव्य और कला के समन्वय की जीती–जागती मूर्ति है। उसके चरित्र में युद्ध, कला, संगीत तथा आदर्श नारी के सम्पूर्ण गुण मूर्तिमान हो उठे हैं। उसका चरित्र हिन्दी कथा–साहित्य

की अद्वितीय धरोहर है। **मृगनयनी सौन्दर्यमयी, साहसी, निड़र, प्रकृति प्रेमी, कर्तव्यपरायण, उदार, त्यागी सहनशील, प्रेरणामयी, सरल, गंभीर और संयम की प्रतिमूर्ति है। मृगनयनी का दिव्य चरित्र, भारतीय इतिहास तथा नारी–सम्मान को गौरवान्वित किया है। इस महान नारी का अनुपम चरित्र मानवता को सदैव आलोक प्रदान करता रहेगा।**

(ii) लाखी :

लाखी जाति की अहीर लड़की है। उसके पिता और भाई सिकंदर लोदी के आक्रमण में मारे जा चुके हैं। वह निन्नी की समवयस्का और अंतरंग सहेली है। उसी के साथ हँसी मजाक, रूठना–मनाना, खेलना–कूदना सभी कुछ होता है। दोनों होली खेलती हैं। निन्नी के ही अनुकरण पर वह तीर चलाना सीखती है और दोनों साथ–साथ शिकार खेलने भी जाती हैं। अटल के प्रति उसके मन में आकर्षण जाग उठता है। वह स्वभाव से निर्भीक और साहसी भी है। प्रेम–पंथ के प्रथम चरण में भी वह निःसंकोच रूप से बिना आँख नीची किए स्वयं ही संकोची अटल से सीधी प्रेमाभिव्यक्ति करवा लेती है। वह अटल को पूरी तरह दृढ़ कर लेने के पश्चात् आश्वस्त हो जाती है। अंत तक प्रेम का निर्वाह करती है, डिगती नहीं है।

लाखी स्वाभिमानी और कर्मप्रधान है। यद्यपि उसने निन्नी के ही अनुकरण कर शिकार करना और तीर चलाना सीखा है, पर शीघ्र ही उससे अधिक अनुभवी और कुशल हो जाती है। उसे अपनी जाति पर बड़ा गर्व है। उसी के वशीभूत सोचती है जब एक गूजर लड़की लक्ष्यभेद कर सकती है तो अहीर लड़कियाँ क्यों नहीं कर सकतीं। माँ की, लू लग जाने से मृत्यु हो जाने पर, वह निन्नी अटल के पास रहने आ जाती है, पर वह स्वाभिमानिनी है। दबैल बनकर या रखेली बनकर नहीं रहना चाहती।

लाखी, नटों से रस्सी पर चलना सीख लेती है। उनके वस्त्राभूषण में रुचि प्रकट करती है। उसमें साहस निन्नी से अधिक है। सुल्तान गयासुद्दीन खिलजी द्वारा भेजे सवारों में से एक को तीर मार के समाप्त कर देती है एवं बेझिझक लाश में बिंधी हुई बरछी निकाल लेती है। जबकि निन्नी ऐसा नहीं कर पाती।

लाखी में विनोदवृत्ति भी पर्याप्त है। निन्नी से मानसिंह के संबंध को लेकर ठिठोली करती रहती है। मानसिंह तक को कहना पड़ता है कि तुम्हारी सहेली विकट है। निन्नी के विवाह के पश्चात् वह अटल के साथ अकेली रह जाती है। गाँववाले और स्त्रियाँ उन दोनों के संबंध में शंका करते हैं। अटल का गर्भ उसे है, ऐसी अफवाहें फैलाते हैं, पर वह किसी की भी परवाह नहीं करती। गाँववाले उनकी शादी नहीं होने देते, तब अटल से एकांत में प्रेम–विवाह कर लेती है। पूरा गाँव उनका बहिष्कार कर देता है। अपने स्वाभिमान को ध्यान में रखकर वह ग्वालियर न जाते हुए नटों के साथ मगरौनी होते हुए नरवर चली जाती है। उनके पीछे नटों का टोला भी नरवर पहुँचता है। यहीं पिल्ली उसे गयासुद्दीन का प्रेम संदेश सुनाती है, जिसे सुनकर वह चुप्पी साध लेती है। अंत में जब योजनानुसार रात्रि में रस्सी की नसैनी लगाकर नट उसे ले जाने की तैयारी करते हैं तब वह नटों के रस्सी पर चढ़ जाने के बाद बेझिझक एक ही झटके में उसे काटकर, नटों सहित सौत बनने वाली पिल्ली का सर्वनाश कर देती है। इस प्रकार नरवर को शत्रुओं के हाथों से बचाती है।

लाखी के वीरतापूर्ण कृत्य, साहस और नरवर को बचाने के उपलक्ष्य में राजा मानसिंह अटल को नरवर का किला जागीर में दे देते हैं और उन्हें ग्वालियर ले आते हैं। यहीं अटल के साथ उसका विधिवत् विवाह हो जाता है। अंतर्जातीय विवाह के कारण यहाँ भी उसे मानसिक कष्ट सहना पड़ता है। उसकी सहिष्णुता विशेष रूप से यहाँ परिलक्षित होता है।

सुमनमोहिनी विवाह के बाद लाखी को भोजन का आमंत्रण पत्र देकर बुलाती है, पर उसके हाथ का छुआ भोजन नहीं खाना चाहती। विष मिला भोजन परोसती है। यहाँ वह काफी धैर्य, संयम और शालीनता का परिचय देती है। समय–समय पर मृगनयनी को भी समझाती रहती है। उसका मृगनयनी से हार्दिक स्नेह है। उसके पुत्र राजसिंह और बालसिंह पर भी अपना प्रेम लुटाती है।

सिकंदर के आक्रमण में अटल के साथ अपनी राई गढ़ी की रक्षा हेतु जाती है। वहाँ गढ़ी की रक्षा करते हुए एक रात्रि के अंधेरे में अकेले ही कई शत्रुओं का संहार करके, तीर लगने से वीरांगना के रूप में उसका अंत होता है। मरते समय वह अटल से दूसरा विवाह अपनी ही जाति में कर लेने की बात कहकर अपने प्रेम और हृदय की विशालता का परिचय देती है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि लाखी 'मृगनयनी' उपन्यास का सर्वाधिक स्वाभाविक और जीवन्त नारी पात्र है। इसके माध्यम से वर्माजी से अन्तर्जातीय विवाह की समस्या पर प्रकाश डाला है। लाखी का चरित्र सबसे अधिक आकर्षक और प्रभावशाली बन पड़ा है। **लाखी वीर, निड़र, कर्मठ, आखेट प्रिय, आदर्श प्रेमिका, जिज्ञासु, दूरदर्शी, स्वाभिमान, साहसी और धैर्यवान, सहृदय, निष्कपट, आदर्श सखी, बुद्धिमती, विनोद प्रिय, देश–प्रेमी, वीरांगना, अमर बलिदानी है। उसका चरित्र भारतीय नारी का अजेय स्वर है एवं अनेक गुणों की खान है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि भारतीय नारीत्व का पूर्ण रूप लाखी में प्रतिबिंबित होता है।**

3.2. 'मृगनयनी' के प्रमुख पुरुष पात्र

(i) राजा मानसिंह :

राजा मानसिंह का चरित्र 'मृगनयनी' उपन्यास की अनुपम धरोहर है। उसका चरित्र अनेक विशेष गुणों से मंडित है। वह सच्चे अर्थों में मान की रक्षा

के लिए सिंह समान है। उसने भारत के इतिहास के कठोर काल में भी अपार पौरुष और योग्यता से भारत के गौरव की रक्षा की। उसके चरित्र में अनेक विशेषताएँ उपलब्ध होती हैं।

राजा मानसिंह तोमर ग्वालियर का राजा है। सिकंदर लोदी के घेरा उठ जाने के बाद राज्य के पुनर्गठन के कार्य में जुटा हुआ है। वह प्रौढ़ावस्था का प्रभावशाली व्यक्तित्व है। आकृति के अनुरूप ही उसका सबल, विवेकी, नियंत्रित और गंभीर प्रभावशाली व्यक्तित्व है। वह कर्म को महत्व देता है। जनहित के कार्य को वह प्राथमिकता देते हुए, मंदिर के जीर्णोद्धार की बोधन पुजारी की माँग को सुनकर बाद को करवाने का आश्वासन देता है। कला और संगीत के प्रति उसमें विशेष प्रेम है। संगीत का गहरा पारखी है। उसकी स्थापत्य कला के प्रति गहरी अभिरुचि है। बोधन पुजारी के पुनः आमंत्रण पर मृगनयनी और लाखी द्वारा तुर्कों को मार भगाने का समाचार सुनकर प्रजा के भय को दूर करने की दृष्टि से राई की आखेट–यात्रा के लिए तैयार हो जाता है। निहालसिंह उसके साथ जाता है। उसके मन में मृगनयनी का सौंदर्य और शक्ति से युक्त आकर्षण भरे चित्र का भी आकर्षण है जो उसे जाने के लिए प्रेरित करता है। राई ग्राम में पहुँचकर मृगनयनी से प्रथम साक्षात्कार मंदिर के निकट होता है। पहली ही दृष्टि में वह उसके रूप को देखकर मुग्ध हो जाता है। अंत में निन्नी द्वारा किए अनुपम लक्ष्य भेद, साहस और शक्ति को देखकर वह पूर्णतः समर्पित हो जाता है। गंगा–यमुना की सौगंध खा, जन्म–संगिनी बनने की बात कहकर उसका हाथ माँग लेता है। वह सांक नदी से नहर काटकर ग्वालियर तक ले चलने और पर्दा नहीं करने की मृगनयनी की बात मान लेता है। वहीं, गाँव में उसका विवाह संपन्न हो जाता है। इसके पूर्व भी उसके आठ विवाह हो चुके हैं। उसमें सबसे बड़ी सुमनमोहिनी है और नवमी रानी मृगनयनी है।

मृगनयनी और उसकी चर्चा में उसके मन का श्रृंगार और कवित्व फूट पड़ता है। नारी–वर्ग के प्रति उसकी सहृदयता अनेक स्थलों पर प्रकट होती है। वह पहली पत्नी सुमनमोहिनी के व्यंग्यों, कूटोक्तियों को हँसकर सहन करने में ही कल्याण समझता है। जब माँडू का सुल्तान गयासुद्दीन, चंदेरी के सूबेदार शेरखाँ के साथ नरवर पर आक्रमण करता है तब तुरंत सेना को तैयार करता है। उसे अपनी विजय होने पर पूर्ण विश्वास है। युद्ध की भीषण तैयारी के मध्य भी कला और संगीत के प्रति उसका मोह नहीं फूटता। वह उन क्षणों में विजयजंगम की वीणा और बैजनाथ का गायन सुनना चाहता है।

नरवर में गयासुद्दीन को हराके भगा देता है और निहालसिंह द्वारा लाखी के वीरतापूर्ण कृत्य को सुनकर लाखी को अपनी मोतियों की माला देकर पुरस्कृत करता है। अटलसिंह को नरवर का किला और जागीर दे देता है। इसके बाद वह पुनः संगीत और कला में लीन हो जाता है। कर्ण मंदिर में बैठा गायन–वादन सुनता है और संगीत की अपनी गहरी परख का परिचय देता है।

मानसिंह सच्चा प्रजापालक है। उसने धर्मशाला, कुआँ, बावडी और गरीबों के लिए निवास–गृह निर्मित कराए। गरीबों के लिए राज्य की ओर से अन्न क्षेत्रों की भी व्यवस्था की। वह स्वयं वेश बदलकर गरीबों के दुःख दर्द की खबर लेता है। मजदूर के यहाँ जाकर चक्की तक पीसता है। अपनी धार्मिक श्रद्धा के कारण वह सिकंदर द्वारा भेजे जासूस को, जो कि योगी बनके आता है, सुरंग का पता दे देता है, जिसका उसे बाद को परिताप होता है।

सिकंदर राई की गढ़ी पर आक्रमण कर देता है। वहाँ के संकेत को देखकर वह दूसरे दिन सिकंदर पर आक्रमण कर देता है और उसे हराकर राई गढ़ी में पहुँचता है। वहाँ उसे लाखी और अटल की वीरगति का समाचार मिलता

है जिसे सुनकर उसकी आँखें भर आती हैं। सिकंदर हारकर आगरा वापस लौट जाता है।

सिकंदर पुनः इटावा की सहायक सेना आ जाने पर ग्वालियर पर आक्रमण करता है। मानसिंह किले के अंदर से ही छापामार युद्ध लड़ता है। इस बार वह नरवर को सहायता नहीं पहुँचा पाता। इसलिए उसका पतन हो जाता है। वह सिकंदर के भाई जलाल को ग्वालियर में आश्रय देता है, किंतु कोई सक्रिय सहायता नहीं करता। इस कारण जलाल गोंडवाना चला जाता है। इन बातों से उसकी धार्मिक उदारता प्रकट होती है। अंत में वह कला और कर्तव्य के संतुलित पथ पर बढ़ता हुआ मृगनयनी के साथ सुखी जीवन–यापन करता दिखलाई देता है।

सारांश यह है कि 'मृगनयनी' उपन्यास में मानसिंह का चरित्र पुरुष पात्रों में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। वह एक इतिहास सम्मत पात्र है। वह इस उपन्यास का नायक है। वर्माजी ने अपने इस उपन्यास में मानसिंह का चरित्र एक आदर्श शासक के रूप में प्रस्तुत किया है। उसका चरित्र अत्यंत उज्ज्वल है। उसमें अनेकानेक गुण विद्यमान है। वह प्रजा–वत्सल, कुशल शासक, कर्मठ, कला–प्रेमी, राष्ट्र–प्रेमी, शांति–प्रिय, उदार, गुण–ग्राही, क्षमाशील, योद्धा, संयमी, आदर्श पति एवं आदर्श राजा है।

(ii) अटलसिंह :

'मृगनयनी' उपन्यास में मानसिंह के पश्चात् यदि किसी पुरुष पात्र का महत्व है तो वह अटल का है। वह यथा नाम तथा गुण का परिचायक है। वह जीवनपर्यन्त अटल अर्थात् अड़िग रहता है। संसार की कोई भी शक्ति उसे अपने मार्ग से नहीं हरा पाती है। वह निपट साहसी और वज्र संयमी है। वह भिन्न जाति

की लाखी से प्रेम करता है और एक ही घर में दीर्घकालीन संयुक्त जीवन में भी विकारातीत, गंगाजल की तरह पवित्र रहता है।

अटल के चरित्र की विशेष विशेषता यह है कि वह घर में बड़ा एवं आदर्श भाई है। अतः वह अपनी जिम्मेदारी अच्छी तरह से समझता है। परिवार में वह तथा उसकी छोटी बहन निन्नी (मृगनयनी) है। उसके मन में अपनी बहन के लिए अपार प्रेम तथा ममत्व है। वह अपनी बहन को प्रसन्न और सुरक्षित रखने में कोई कसर नहीं उठा रखता है। उसके माता–पिता सिकंदर के आक्रमण के समय मारे गए थे। वह अपनी बहन का लालन–पालन पिता के समान ही करता है। वह उत्तरदायी भाई की तरह अपनी बहन की शादी के लिए चिन्तित है। उसी का परिणाम है कि इधर–उधर दौड़–धूप करता है। वह निन्नी के लिए ग्वालियर में एक लड़का भी देखता है, जब वह राजी नहीं होती तो फिर आगे बात नहीं चलाता है। इस प्रकार वह अपनी बहन को अपूर्व स्नेह प्रदान करके आदर्श भाई की भूमिका निभाता है। उसे राजा के साथ निन्नी के विवाह से अपार प्रसन्नता होती है।

अटल का जीवन संघर्षों की सजीव कहानी है। वह जो करता है, उसे पूरा करके दिखाता है। लाखी के साथ विवाह के लिए वचनबद्ध है। परंतु बोधन पुजारी और गाँव का मुखिया उसे ऐसा नहीं करने देते हैं। इसके लिये उसे गाँव छोड़ना पड़ता है और जाति से बहिष्कृत होना पड़ता है। परंतु वह अपने संकल्प पर अड़िग है। सत्यता यह है कि वह अपनी प्रतिज्ञा को जीवनपर्यन्त निभाता है।

अटल का चरित्र साहस और वीरता का ज्वलंत उदाहरण है। वह अपने साहस के कारण ही अपनी बहिन का लालन–पालन कर पाता है। साहस से ही वह अनेक विरोध होने पर भी लाखी को अपनी बना पाता है। अपने जीवन में कभी

निराश नहीं होता है। उसकी साहसी प्रवृत्ति ने ही उसे वीर बना दिया है। वह राई की गढ़ी की रक्षा करते हुए अपूर्व वीरता का परिचय देता है। वह कुशल और वीर योद्धा है। वह सिकंदर के सैनिकों से प्राण–प्रण से जूझ पड़ता है। अन्त में वह वीर युवक निड़रता से लड़ता हुआ वीरगति को प्राप्त होता है।

अटल इस उपन्यास का ऐसा सजीव पात्र है जो संघर्षों से लड़ता हुआ अपूर्व परिश्रम तथा आत्मनिर्भरता का परिचय देता है। वह श्रम का अनन्य उपासक है। वह अपने जीवन की समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति अपने श्रम से ही करता है। परिश्रमी होने के कारण अटल किसी के सामने हाथ नहीं फैलाता है। वह आत्मनिर्भर है। इसी का परिणाम है कि मानसिंह के साथ निन्नी का विवाह हो जाने पर भी उससे कुछ इच्छा नहीं करता है। वह सब कुछ पुरुषार्थ से प्राप्त करता है।

अटल आदर्श प्रेमी है। अटल को लाखी से प्रेम करने के कारण गाँव के लोगों के व्यंग्य सहन करते पड़ते हैं। इसके अतिरिक्त उसे लाखी से प्रेम के कारण ही गाँव भी छोड़ना पड़ता है। वह सभी संघर्षों से जूझते हुए अपने प्रेम के अद्वितीय आदर्श को बनाये रखता है, उसका प्रेम अत्यन्त पुनीत और निर्व्याज है। अन्त में वह लाखी के साथ विवाह करने में सफल होता है। राजा मानसिंह उसका विवाह बड़ी धूमधाम के साथ करता है। अटल सच्चे अर्थों में आदर्श प्रेमी की तरह अपनी प्रेमिका के बिना जीवित भी नहीं रहता है। वह युद्ध करते हुए वीरगति को प्राप्त करता है।

अटल के चरित्र में विनोद प्रियता के दर्शन होते हैं। उसके चरित्र की यह विशेषता उपन्यास के आरंभ में होली के हुडदंग के समय प्रकाश में आती है। वह होली के अवसर पर गोबर–कीचड़ से पुता हुआ हास–परिहास में निमग्न है। इस अवसर पर वह दिल्ली के बादशाह का जो अभिनय करता है, उसमें भी उसकी विनोदप्रियता का सजीव रूप देखने को मिलता है।

स्वाभिमानी की भावना अटल के चरित्र में कूट–कूटकर भरी हुई है। जब उसे निन्नी की शादी करनी है, तो वह अपने स्वाभिमान के कारण राजा मानसिंह से कुछ नहीं लेना चाहता है। वह किसी के समक्ष हाथ फैलाना अपमान समझता है। अटल निष्कपट और सरल युवक चरित्र का है। उसके जीवन में कहीं भी छल या कपट की भावना दिखायी नहीं देती है।

अटल एक आदर्श भारतीय युवक है। वह प्रगतिशील विचारों का होते हुए भी मर्यादा को जीवन के लिए आवश्यक मानता है। मर्यादा के कारण ही वह लाखी के अनाज को स्वीकार करना नहीं चाहता। जब लाखी अपनी माँ की मृत्यु के बाद अटल के घर में रहने आ जाती है तब भी अटल उसकी निस्सहाय अवस्था का तनिक भी अनुचित लाभ नहीं उठाता है। गाँव की स्त्रियाँ और बोधन भी उनको शंका की दृष्टि से देखते हैं। मगर अटल का प्रेम मर्यादा में आबद्ध होने के कारण गंगाजल की तरह पवित्र है।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि 'मृगनयनी' उपन्यास में अटल का चरित्र विशेष महत्व रखता है। वह इस उपन्यास का सहनायक है। वह अपने अद्वितीय गुणों के कारण एक साधारण युवक से असाधारण मानव बन जाता है। वह आदर्श भाई, दृढ़ प्रतिज्ञक, साहसी, वीर, परिश्रमी, आत्मनिर्भर, आदर्श प्रेमी, विनोद प्रिय, स्वाभिमानी, निष्कपट, सरल और भोला–भाला ग्रामीण युवक है।

3.3. 'मृगनयनी' के गौण स्त्री पात्र

(i) सुमनमोहिनी :

'मृगनयनी' उपन्यास में सुमनमोहिनी भारतीय सौत का प्रतीक है। उसकी आरंभ से अंत तक स्थिर झाँकी केवल इसी प्रतीक सिद्धि के लिए है। वह

मानसिंह तोमर की सबसे बड़ी रानी है। वह अत्यंत प्रचंड स्वभाव की स्त्री है। उसी का फल है कि वह अपने कार्य की सिद्धि के लिए किसी भी प्रकार का साधन अपना सकती है। उसकी यह प्रबल इच्छा है कि उसका पुत्र विक्रमादित्य राज्य का उत्तराधिकारी हो। उसे अपने इस उद्देश्य में मृगनयनी की उदारता से सफलता प्राप्त होती है।

सुमनमोहिनी का जैसा नाम है वैसे उसके चरित्र में गुण नहीं है। वह सैतिया डाह की जीती–जागती मूर्ति है। वह अपनी इसी दूषित वृत्ति के कारण मृगनयनी पर सदैव व्यंग्य करती रहती है। इसके अतिरिक्त मृगनयनी के जीवन को समाप्त करने के लिए तीन बार विष देने का प्रयत्न करती है, परंतु सफलता नहीं मिल पाती है। यह कला के माध्यम से मृगनयनी को निःसंतान होने की औषधि देने का भी षडयंत्र करती है। परंतु इसमें भी वह सफल नहीं हो पाती है।

सुमनमोहिनी अपने सैतिया डाह के कारण ही सदैव मानसिंह से झगड़ती रहती है। वह मानसिंह से स्पष्ट कह देती है कि ग्वालियर का राज्य उसके पुत्र विक्रमादित्य को मिलना चाहिए। इस पर मानसिंह उसके पुत्र के लिए नरवर की जागीर देने की बात करता है तो वह आग बबूला हो जाती है और कहती है छोटों से इतना प्यार है कि वे दोनों ग्वालियर में रहें और विक्रम नरवर में रहे। वह इतनी क्षुद्र है कि अपने पुत्र के ग्वालियर का उत्तराधिकारी बन जाने पर भी मृगनयनी के त्याग के लिए साधुवाद तक नहीं देती है। **सत्यता तो यह है कि सुमनमोहिनी अपने कार्य की सिद्धि के लिए कोई भी साधन अपना सकती है। उसके लिए साध्य का महत्व है, साधन का नहीं।**

3.4. 'मृगनयनी' के गौण पुरुष पात्र

(i) सिकंदर लोदी :

सिकंदर लोदी बहलोल लोदी का पुत्र है। दिल्ली का सुल्तान है। ग्वालियर पर अपना पहला आक्रमण करके, असफल होकर लौटता है। तत्पश्चात् वह दिल्ली की ही राजनीति में उलझा रहता है। दूसरी बार ग्वालियर पर आक्रमण करता है। पहले आक्रमण से यह दूसरा आक्रमण 8–9 वर्ष बाद हुआ। उसका सामना, मानसिंह का पुत्र विक्रमादित्य और निहालसिंह करते हैं। उस समय राई गाँव तक उसकी सेना पहुँच जाती है। वही दोनों में मुठभेड़ होती है। तभी उसे दिल्ली से समाचार मिला कि कुछ सरदार पंजाब में सर उठा रहे हैं एवं उसका भाई जलाल जौनपुर और बंगाल में गड़बड़ मचा रहा है। अपनी अलग सल्तनत कायम करना चाहता है। वह युद्ध बंद करके, संधि वार्ता का संदेश भेजता है और दिल्ली चला आता है क्योंकि उसे अपने पिता की वह बात याद है, जब उसके पिता पंजाब के सूबेदार थे और दिल्ली के सूने सिंहासन को मात्र दो हज़ार टके में एक फकीर ने बेच दिया था। कहीं वही कहानी फिर न दोहराई जाय, इसका उसे भय है। वह दिल्ली पहुँचकर बागी सरदारों का मूलोच्छेदन करता है।

मानसिंह के भेजे दूत निहालसिंह से, दिल्ली दरबार में चर्चा करते हुए, आक्रमण के कारण हुई क्षति और खर्चे की दुगुनी रकम की माँग करता है। पर जब निहालसिंह बिना दबे उसे सच्चाई से परिचित कराके अपनी राजपूती शान का परिचय देता है तो वह इसे नहीं सह पाता। इशारे में उसे दरबार से ले जाने को कहकर दूत का वध करा देता है।

सिकंदर के लखनऊ जाने पर मुल्ले–मौलवी उसके इर्द–गिर्द जमा हो जाते हैं। वह उनका कट्टर पक्षपाती था एवं उनके राजनैतिक महत्व को भी जानता

था। मुल्लों द्वारा धार्मिक बहस हेतु किए ऐलान की चुनौती स्वीकारते, जब बोधन पुजारी उनकी मजलिस में अपने धर्म का पक्ष रखता है तब बीच में अपनी धार्मिक कट्टरता का परिचय देते हुए सिकंदर अन्यायपूर्वक हस्तक्षेप करता है। ग्वालियर का उसे रहवासी जानकर, उसे मानसिंह का जासूस कहता है और मुल्ले–मौलवी के हाथों उसकी तकदीर का फैसला छोड़ देता है। अंत में बोधन द्वारा मुस्लिम धर्म नहीं स्वीकारने पर फैसला अनुसार उसका वध कर दिया जाता है। जब उसके सैनिक इस अन्याय के प्रति कुछ उत्तेजित होते हैं तब वह मौलवियों के परामर्श पर, लूट का कुछ अंश उनमें बाँटकर उन्हें शांत कर देता है।

ग्वालियर को नष्ट करने केलिए आगरे को अपनी फौजी छावनी के रूप में बसा करके उसने बड़ी भारी फौज तैयार की। बाद को अपनी सेना के तीन खंड करके, एक खंड नरवर की ओर भेजता है और दो खंड सेना को साथ लेकर, तीनों दिशाओं से ग्वालियर पर आक्रमण करने आगे बढ़ता है। वह स्वयं सेना का संचालन करता है।

मानसिंह ग्वालियर के किले में बंद होकर युद्ध करने लगता है। तब सिकंदर ग्वालियर और राई दोनों को घेर लेता है। वह अपने प्रधान जासूस से ग्वालियर के किले की सुरंग का पता पूछता है। सुरंग मिलती है पर उसमें पक्की चिनाई होने से वह उसके किसी काम नहीं आती। मानसिंह के प्रचंड आक्रमण एवं नरवर की दिशा से दस हजार घुड़सवार सेना आने का समाचार सुनकर अंत में हारकर उसे घेरा हटाना पड़ता है। पर जब उसकी इटावा की सहायक सेना चंबल की घाटियों में से उससे आ मिलती है तब वह पुनः ग्वालियर पर सेना के एक खंड को भेजकर उसे घेर लेता है और दूसरे खंड के साथ स्वयं सेना संचलित करता नरवर पर आक्रमण करता है। राजपूत राजा राजसिंह भी अपने दस्ते के साथ उससे आ मिलता है। वह 12 माह तक नरवर पर घेरा डाले रहता है। अंत में जब नरवर ने भूख के कारण आत्मसमर्पण कर दिया तब उसे विजय मिली।

उसने छः माह तक रहकर वहाँ की मूर्तियाँ, मंदिर आदि को चकनाचूर कर दिया, पर सेठ–साहूकारों को उसने नहीं सताया। छह माह के बाद राजसिंह को बुलाकर किला तथा नरवर की जागीर उसे देकर ग्वालियर की दिशा में आगे बढ़ता है, पर वहाँ जीत की आशा न होने के कारण वह वापस दिल्ली लौट जाता है। अंत में ग्वालियर आता है। पर पूरी सहायता न मिलने पर गोंडवाना चला जाता है। पर वहाँ से उसे पकड़कर सिकंदर उसका वध करवा देता है। सिकंदर ग्वालियर की हार को मरते दम तक नहीं भूलता। उसे जीतने के लिए उसने पुनः तैयारी की; किंतु तैयारी करते–करते ही उसकी मृत्यु हो गई। **इस प्रकार सिकंदर लोदी इस उपन्यास में धर्मान्ध, नृशंस, क्रूआकांता और अत्याचारी सुल्तान के रूप में दिखाई देता है।**

(ii) गयासुद्दीन खिलजी :

'मृगनयनी' उपन्यास में गयासुद्दीन शुद्ध ऐतिहासिक पात्र है। वह मालवा का सुल्तान है। वह विलासी और कामुक वर्ग का प्रतिनिधि पात्र है। गयासुद्दीन अपने पिता महमूद खिलजी की मृत्यु के बाद गद्दी पर बैठा। उसे शराब पीने का बहुत चाव था। वह मदिरा पीने पर सहज, स्वाभाविक मानव–सा हो जाता था। वह पीता तो अधिक न था परंतु पी लेने पर उसकी मानवीयता, उपेक्षणीयता और हास्यप्रियता तथा कामुकता बढ़ जाती थी। वह बहुत ही कामुक है। उसी का परिणाम कि वह लाखी और निन्नी को प्राप्त करने के लिए लालायित हो उठता है। वह नटों की इसमें सहायता लेता है। जब नट इसमें असफल हो जाते हैं तो वह मटरू पर अपना गुस्सा उतारता है। वह अपनी कामुक वृत्ति के कारण ही ग्वालियर पर आक्रमण करता है, परंतु उसे सफलता नहीं मिल पाती है। वह इतना विलासी और कामुक है कि उसे प्रजा की तनिक भी चिंता नहीं है। वह कामुक होने के साथ–साथ क्रोधी भी है। जब उसे क्रोध आता है तो किसी की नहीं सुनता है। मटरू के लाख समझाने पर भी वह नट–वेदियों को भगा देता है।

उसके चरित्र में सनकीपन भी दिखाई देता है। वह युद्ध भूमि के कोसों दूर रहता है। वह नरवर से ग्वालियर फतह करता हुआ, दिल्ली जीत लेने की कल्पनामात्र से ही बहुत प्रसन्न है। गयासुद्दीन कायर और अदूरदर्शी है। वह निड़र और वीर नहीं है। वह स्वयं कुछ नहीं सोच पाता है। उसका दिल–दिमाग और आँखें अपनी नहीं है। उसने सब कुछ मटरू से उधार लिया है। वह पूर्ण रूप से मटरू पर आश्रित है। वह प्रजा का शोषण करने में भी तनिक भी नहीं हिचकता है। उसकी इस प्रवृत्ति के कारण ही प्रजा उसका साथ नहीं देती है। उसके प्रत्येक कार्य में उतावलापन दिखाई देता है। किसी भी काम में वह दूसरे से विचार–विमर्श नहीं करता है। वह कट्टरता का विरोधी है। इसी का फल है कि वह मुल्ला और मौलवियों को प्रसन्न नहीं रख पाता है। वे सभी उससे शराब पीने को मना करते हैं और धर्म की दुहाई देते हैं, परंतु वह किसी की बात नहीं सुनता है। दूसरी ओर वह हिन्दुओं की मूर्तियों को तोड़कर उन्हें अप्रसन्न नहीं करना चाहता है। अंत में उसे मटरू और अपने पुत्र नसीरुद्दीन के षडयंत्र का शिकार बनना पड़ता है। वे दोनों मिलकर उसे विष दे देते हैं। **इस प्रकार गयासुद्दीन अत्याचारी, कामुक, क्रोधी, सनकी, विलासी, कायर, अदूरदर्शी और शोषण सामंत के रूप में पाठकों के समक्ष आता है।**

(iii) महमूद बघर्रा :

महमूद बघर्रा 'मृगनयनी' उपन्यास का ऐतिहासिक पात्र है। वह गुजरात का सुल्तान है। वह अत्याचारी, नृशंस, कामुक और पेटू है। वह विलासी और कामुक होने के कारण ही निन्नी और लाखी को प्राप्त करने के लिए बेताब हो जाता है। वह भोग को ही जीवन का सर्वस्व समझता है। इसके साथ ही वह क्रूर और नृशंस भी है। उसका इतना आतंक है कि सभी सामंत उसके समक्ष थर–थर काँपते हैं। वह खूब लम्बा–चौड़ा, मोटा–तगड़ा, बलिष्ठ पुरुष है। उसकी

दाढ़ी–मूँछें भी बेहिसाब लम्बी हैं। वह इतना पेटू है कि दिन–रात में कई मन भोजन कर जाता है। 150 पके केले, सेर भर शहद और सेर भर मक्खन रोज उसका कलेवा था। **वर्मा जी ने पेटू के रूप में उसका चित्रण करके एक विचित्र व्यक्तित्व के रूप में पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है।**

(iv) नसीरुद्दीन :

नसीरुद्दीन, गयासुद्दीन खिलजी का पुत्र था। 25 वर्ष की अवस्था थी। सदैव मुल्ला–मौलवियों से घिरा हुआ रहता था। उसने पर्याप्त शिक्षा प्राप्त की। मुल्लाओं के प्रभाव और अपनी लिप्सा के कारण ख्वाजा मटरू की सलाह पर अपने पिता को मार डालने का षडयंत्र रचता है। एक खवासिन को मिलाकर उसके सहयोग से पिता को जहर देकर मरवा डालता है। बाद को खबर न फैले इस दृष्टि से खवासिन को भी अपने हाथों तलवार के घाट उतार देता है। पिता की झूठी बीमारी का वृत्तांत फैलाकर अखबारनवीस से उसके प्राणांत का वृत्त बहुत दिनों बाद लिखवाता है। इसके बाद नसीर अपनी प्रचंड भूख, स्त्रियों की भूख, कामवासना की वृत्ति में जुट पड़ा। ख्वाजा मटरू और न जाने कितने मटरू उसकी सहायता के लिए फट पड़े।

अपने हरम में 15 हजार सुंदरियों को रखने का उसने प्रण किया। इस कार्य के लिए उसके दूत चारों ओर घूमते हैं। एक दिन माँडू की बड़ी झील कालियादाह में अपनी अप्सराओं सहित वह जल–विहार करता है। होड़ा–होड़ी में उसकी बेगमें तैरते–तैरते दूर निकल गईं और थक कर डूबने लगीं। तब बचाने के लिए चिल्लाईं। नसीरुद्दीन भी चिल्लाया। इन पुकारों को सुनकर उसके सेवकों ने कनात चीरकर डूबती हुई महिलाओं को बचाया। जब नसीर की उन पर दृष्टि पड़ी तब वे पुरस्कार की लालसा में सामने आए। पर पुरस्कार देने के

बजाय उसने जिन आँखों ने हरम की महिलाओं को देखा था और जिन हाथों ने छुआ था, उन हाथों को काट डालने और सरों को धड़ से जुदा करने की आज्ञा दी। दूसरी बार वैशाख के महीने में जल–विहार की बात उसे सूझी। उस समय तक 15 हज़ार की बेगमें हो चुकी थीं। वह उन्हें लेकर जल विहार करता है। थक जाने के कारण जब उसका दम फूलने लगता है तब उसने अपनी जान बचाने के लिए चिल्लाया। मटरू भी चिल्लाया। सिपाहियों ने सुना, पर उसे बचाने कोई नहीं गया। इस प्रकार पानी में डूबकर उसकी मृत्यु हो गई। इस प्रकार नसीरुद्दीन का चरित्र कामुक, विलासी, क्रोधी और निर्दयी पुत्र के रूप में चित्रित हुआ है।

(v) बोधन पुजारी :

बोधन पुजारी 'मृगनयनी' का ऐतिहासिक पात्र है। उसका व्यक्तित्व ब्राह्मणत्व के संस्कारों से पुष्ट है। वह इस उपन्यास में कट्टर और परंपरावादी ब्राह्मणत्व वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है। उसकी शास्त्रों पर अचल आस्था है और वर्णाश्रम धर्म पर अटल विश्वास है। इस रूप में वह परंपरावाद का प्रतीक है। वह धार्मिक प्रवृत्ति का व्यक्ति होते हुए भी रसिक है। होली के अवसर पर उसकी रसिक भावना विशेष रूप से परिलक्षित होती है। वह अत्यंत व्यवहार कुशल है। वह सरलता से ग्रामीण जनता को प्रभावित कर लेता है। इसके अतिरिक्त वह अपनी व्यवहारशीलता से ही राजा मानसिंह का कृपापात्र बन जाता है। वह बड़ी सरलता से राजा से मंदिर के नवीनीकरण की स्वीकृति प्राप्त कर लेता है। अपने व्यवहार की चतुरता से ही गाँव की जनता से उसकी उपज के तीसवें भाग की उगाही कर लेता है।

बोधन परंपरागत रूढ़ियों का समर्थक है। अपनी रूढ़िवादिता के कारण ही अटल और लाखी के विवाह की स्वीकृति नहीं देता है। वह नारी और शूद्रों को वेद पढ़ने की अनुमति नहीं देता है। राजा मानसिंह के द्वारा बैजू को नायक की

पदवी देने पर रुष्ट होता है। उसका विश्वास है कि बैजू का संगीत में नवीनता को जन्म देने का कोई अधिकार नहीं है क्योंकि प्राचीन ऋषि–मुनियों ने जो कुछ कर दिया है वह अंतिम है।

बोधन में लोभ की दूषित मनोवृत्ति के भी दर्शन होते हैं। वह गाँव वालों को भ्रम में डालकर कुछ न कुछ देने के लिए प्रेरित करता है। उसकी इस मनोवृत्ति को देखकर अटल अपने तथा लाखी के विवाह के लिये उसे प्रलोभन देता है। परंतु वह मानता नहीं है। उसमें स्वाभिमान की भावना बहुत अधिक है। वह किसी से दबता नहीं है। जब वह अटल को विवाह की स्वीकृति नहीं देता है तो अटल उसे राजा की कृपा का संकेत देता है। मगर वह अंत तक नहीं मानता है।

बोधन स्वाभिमानी होने के साथ–साथ हठधर्मी भी है। वह धर्म के रूढ़िगत रूप का कट्टर पक्षपाती है। वह धर्म में किसी प्रकार का परिवर्तन स्वीकार नहीं करता है। उसकी हठधर्मी ही उसकी मृत्यु का कारण बनती है। वह मुल्लाओं के द्वारा धर्म परिवर्तन के लिए विवश किया जाता है। परंतु वह अपने धर्म को किसी कीमत पर छोड़ने को तैयार नहीं है। जब वह इस्लाम को स्वीकार करने से इनकार करता है तब सिकंदर के आदेश पर उसे मौत के घाट उतार दिया जाता है। इस प्रकार बोधन का धर्म के प्रति हठ, उसके जीवन के लिए घातक बनता है, परंतु उसका चरित्र प्रभावशाली बन पड़ा है।

बोधन पुजारी आस्तिक होने के कारण साहसी है। वह अपनी धारणा को राजा मानसिंह के समक्ष भी अभिव्यक्ति करने से नहीं डरता। वह मौत से नहीं डरता है। वह अपनी निड़रता और साहस के कारण सिकंदर के दरबार में मुल्लाओं से भिड़ जाता है। वह जल्लादों को भी निड़रता के साथ पुकारता है। उसकी यह विशिष्टता उसके चरित्र को अमर बना देती है।

वर्ण व्यवस्था का समर्थन बोधन के जीवन का परम ध्येय है। वह किसी भी मूल्य पर वर्ण–व्यवस्था के बंधन शिथिल करने को तैयार नहीं है। वह वर्णाश्रम

की कट्टरता को मानसिंह के समक्ष भी स्वीकार करता है। वह ब्राह्मण जाति को श्रेष्ठ समझता है। ब्राह्मण को हिन्दू मात्र की आँख मानता है।

बोधन बड़ा ही वाक्–पटु है। वह अपनी बातों से हरेक पर बहुत जल्दी प्रभाव जमा लेता है। वह ग्रामीण लोगों पर भी अपने वाक्चातुर्य से प्रभाव जमाये रखता है। वह अपनी वाक्–पटुता से राजा को भी प्रभावित कर लेता है। अपने इस गुण के कारण ही बड़ी चतुराई से निन्नी की ओर राजा का ध्यान आकर्षित कर देता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि बोधन पुजारी 'मृगनयनी' उपन्यास में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करता है। **उसका व्यक्तित्व ब्राह्मणत्व के संस्कारों से पुष्ट–परिपक्व है। उसके चरित्र में परंपरागत सामाजिक एवं धार्मिक आचार–विचार के दर्शन सहज रूप में होते हैं।**

(vi) विजयजंगम :

विजयजंगम इस उपन्यास में बोधन के नितान्त विपरीत है। वह बोधन के रूढ़िवाद के विरुद्ध है। वह सुधारवादी दृष्टिकोण का व्यक्ति है। वह रूढ़ियों में आबद्ध धर्म से घृणा करता है। वह धर्म में आडंबर तथा प्रदर्शन को महत्व नहीं देता है। इसलिए वह धर्म के सड़े–गले रूप को समाप्त करना चाहता है। वह जाति–पांति का विरोधी है। उसका विश्वास है कि भगवान के लिए सभी बराबर है। वह शैव लिंगायत होने के कारण अत्यंत प्रगतिशील है। वह राष्ट्र का विकास इसी में संभव मानता है कि सभी ऊँच–नीच का विचार किये बिना कंधे से कंधा मिलाकर आगे बढ़े।

विजयजंगम विद्वान एवं अहिंसा में विश्वास रखने वाला है। वह शास्त्र और पुराणों का गहन चिंतक है। उनकी विद्वत्ता के कारण ही प्रत्येक दशा को बहुत जल्दी पहचान लेता है। उसी का परिणाम है कि शत्रु का एक जासूस योगी के

रूप में आता है। राजा उसको सच्चा योगी समझता है, परंतु विजयजंगम अपनी चतुरता से उसके वास्तविक स्वरूप को पहचान लेता है। उसी के कारण होने वाले हानि से ग्वालियर बच जाता है। वह हत्या में आस्था नहीं रखता है। युद्ध के समय अपने कर्तव्य का पूर्ण रूप से पालन करता है।

विजयजंगम महान् कलाविद् भी है। वह ललित कलाओं का अपूर्व ज्ञान रखता है। उसमें वास्तुकला का भी उत्तम ज्ञान है। वह स्वाभिमानी है। वह विद्वान होते हुए अहंकारी नहीं अपितु स्वाभिमानी है। वह किसी के समक्ष हाथ फैलाना मृत्यु के समान समझता है। वह सरल एवं उदार हृदय का विद्वान व्यक्ति है। उसके हृदय में किसी प्रकार की कुटिलता दिखाई नहीं देती है। उसमें विनम्रता और शालीनता भी कूट–कूट कर भरा है। वह मानसिंह का प्रेरक है। वह समय–समय अपने बुद्धि–कौशल से मानसिंह को प्रेरणा एवं मंत्रणा देता है। जब मानसिंह संगीत कला में इतना अधिक विमग्न हो जाता है, प्रजा पालन तथा राज्य की रक्षा की ओर ध्यान नहीं देता है तो विजयजंगम उसे वास्तविक कर्तव्य की ओर उन्मुख करता है। विजयजंगम की मंत्रणा एवं प्रेरणा का मानसिंह पर बहुत प्रभाव पड़ता है। **इस प्रकार स्पष्ट होता है कि वर्मा जी के इस उपन्यास में विजयजंगम का चरित्र अत्यंत स्वाभाविक और सजीव बन पड़ा है। वह विद्वान, कर्मठ, सुधारवादी, अहिंसक, कलाविद, स्वाभिमानी, सरल, उदार एवं श्रम समर्थक है।**

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि वर्मा जी ने 'झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई' एवं 'मृगनयनी' दोनों उपन्यासों में पात्र एवं चरित्र–चित्रण को अत्यंत प्रभावोत्पादक बनाया है।